पढ़ें और सीखें योजना

तारों की जीवन गाथा

अयंत विष्णु नार्लीकर

विभागीय सहयोग

राम दुलार शुक्ल

ोय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्
IONAL COUNCIL OF EDUCATIONAL RESEARCH AND TRAINING

प्रथम संस्करण
मार्च 1990 चैत्र 1911
पुनर्मुद्रण
जनवरी 1998 माघ 1919
PD 5 T GR

एन.सी.ई.आर.टी. के प्रकाशन प्रभाग के कार्यालय

एन सी ई आर टी कैम्पस	108, 100 फीट रोड, होस्डेकेरे	नवजीवन ट्रस्ट भवन	सी डब्ल्यू सी कैम्पस
श्री अरविंद मार्ग	हेली एक्सटेशन, बनाशकरी III इस्टेज	डाकघर नवजीवन	32, बी टी रोड, सुखचर
नई दिल्ली 110016	**बैंगलूर 560085**	**अहमदाबाद 380014**	**24 परगना 743179**

रु. 18.00

प्रकाशन प्रभाग में सचिव, राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद, श्री अरविंद मार्ग, नई दिल्ली 110 016 द्वारा प्रकाशित तथा नीलम ऑफसेट, बी-147, डी. डी. ए. शैड, ओखला फेस-I नई दिल्ली 110 020 द्वारा मुद्रित।

प्राक्कथन

विद्यालय शिक्षा के सभी स्तरों के लिए अच्छे शिक्षाक्रम, पाठ्यक्रमों और पाठ्यपुस्तकों के निर्माण की दिशा में हमारी परिषद् पिछले पच्चीस वर्षों से कार्य कर रही है। हमारे कार्य का प्रभाव भारत के सभी राज्यों और संघ-शासित प्रदेशों में प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूप से पड़ा है और इस पर परिषद् के कार्यकर्ता संतोष का अनुभव कर सकते हैं।

किंतु हमने देखा है कि अच्छे पाठ्यक्रम और अच्छी पाठ्यपुस्तकों के बावजूद हमारे विद्यार्थियों की रुचि स्वत: पढ़ने की ओर अधिक नहीं बढ़ती। इसका एक मुख्य कारण अवश्य ही हमारी दूषित परीक्षा-प्रणाली हैं जिसमें पाठ्यपुस्तकों में दिए गए ज्ञान की ही परीक्षा ली जाती है। इस कारण बहुत ही कम विद्यालयों में कोर्स के बाहर की पुस्तकों को पढ़ने के लिए प्रोत्साहन दिया जाता है। लेकिन अतिरिक्त पठन में बच्चों की रुचि न होने का एक बड़ा कारण यह भी है कि विभिन्न आयुवर्ग के बच्चों के लिए कम मूल्य की अच्छी पुस्तकें पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध भी नहीं हैं। यद्यपि पिछले कुछ वर्षों में इस कमी को पूरा करने के लिए कुछ काम प्रारंभ हुआ है पर वह बहुत ही नाकाफी है।

इस दृष्टि से परिषद् ने बच्चों की पुस्तकों के लेखन की दिशा में एक महत्वाकांक्षी योजना प्रारंभ की है। इसके अंतर्गत "पढ़ें और सीखें" शीर्षक से एक पुस्तकमाला तैयार करने का विचार है जिसमें विभिन्न आयुवर्ग के बच्चों के लिए सरल भाषा और रोचक शैली में अनेक विषयों पर बड़ी संख्या में पुस्तकें तैयार की जाएँगी। हम आशा करते हैं कि बहुत शीघ्र ही हिन्दी में हम

निम्नलिखित विषयों पर 50 पुस्तकें प्रकाशित कर सकेंगे।

(क) शिशुओं के लिए पुस्तकें
(ख) कथा साहित्य
(ग) जीवनियाँ
(घ) देश-विदेश परिचय
(ङ) सांस्कृतिक विषय
(च) वैज्ञानिक विषय
(छ) सामाजिक विज्ञान के विषय

इन पुस्तकों के निर्माण में हम प्रसिद्ध लेखकों, वैज्ञानिकों, अनुभवी अध्यापकों और योग्य कलाकारों का सहयोग ले रहे हैं। प्रत्येक पुस्तक के प्रारूप पर भाषा, शैली और विषय-विवेचन की दृष्टि से सामूहिक विचार करके उसे अंतिम रूप दिया जाता है।

परिषद् इस माला की पुस्तकों को लागत-मूल्य पर ही प्रकाशित कर रही है ताकि ये देश के हर कोने में पहुँच सकें। भविष्य में इन पुस्तकों को अन्य भारतीय भाषाओं में अनुवाद कराने की भी योजना है।

हम आशा करते हैं कि शिक्षाक्रम, पाठ्यक्रम और पाठ्यपुस्तकों के क्षेत्र में किए गए कार्य की भाँति ही परिषद् की इस योजना का भी व्यापक स्वागत होगा।

प्रस्तुत पुस्तक **तारों की जीवन गाथा** के लेखन के लिए **श्री जयंत विष्णु नार्लीकर** ने हमारा निमंत्रण स्वीकार किया जिसके लिए हम उनके अत्यंत आभारी हैं। जिन-जिन विद्वानों, अध्यापकों और कलाकारों से इस पुस्तक को अंतिम रूप देने में हमें सहयोग मिला है उनके प्रति मैं कृतज्ञता ज्ञापित करता हूँ।

हिन्दी में "पढ़ें और सीखें" पुस्तक माला की यह योजना प्रो. अनिल विद्यालंकार (अवकाश प्राप्त) के मार्ग-दर्शन में चल रही थी। अब यह योजना

प्रोफेसर अर्जुनदेव की देखरेख में चल रही है। उनके सहयोगियों में श्रीमती संयुक्ता लूदरा, डा. रामजन्म शर्मा, डा. सुरेश पांडेय, डा. हीरालाल बाछोतिया और डा. अनिरुद्ध राय सक्रिय सहयोग दे रहे हैं। इस योजना के संचालन में डा. बाछोतिया विशेष रूप से सक्रिय हैं।

इस योजना में विज्ञान की पुस्तकों के लेखन का मार्ग दर्शन दिल्ली विश्वविद्यालय के भूतपूर्व कुलपति और राजस्थान विश्वविद्यालय में वर्तमान प्रोफेसर-एमेरिटस डा. रामचरण मेहरोत्रा कर रहे हैं। विज्ञान की पुस्तकों के लेखन के संयोजन और अंतिम संपादन आदि का दायित्व हमारे विज्ञान एवं गणित शिक्षा विभाग के प्रो. राम दुलार शुक्ल वहन कर रहे हैं।

मैं डा. रामचरण मेहरोत्रा को और अपने सभी सहयोगियों को हार्दिक धन्यवाद और बधाई देता हूँ।

इन पुस्तकों को इतने अच्छे ढंग से प्रकाशित करने के लिए मैं परिषद् के प्रकाशन विभाग के अध्यक्ष और कार्यकर्ताओं, विशेषकर विभागाध्यक्ष श्री सी. एन. राव और मुख्य संपादक श्री प्रभाकर द्विवेदी को हार्दिक धन्यवाद देता हूँ।

इस माला की पुस्तकों पर बच्चों, अध्यापकों और बच्चों के माता-पिता की प्रतिक्रिया का हम स्वागत करेंगे ताकि इन पुस्तकों को और भी उपयोगी बनाने में हमें सहयोग मिल सके।

पी. एल. मल्होत्रा
निदेशक
राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्

नई दिल्ली

प्रस्तावना

"वेदस्य निर्मलं चक्षुः ज्योतिःशास्त्रमनुत्तमम्"

हमारे पूर्वजों ने कहा था कि ज्योतिष्शास्त्र से बढ़कर वेद के अर्थात् ज्ञानी व्यक्ति के निर्मलतर नेत्र और कोई नहीं।

ज्योतिष्शास्त्र से उनका अभिप्राय था आकाश में चमकने दमकने वाले चाँद-तारों – आकाशगंगाओं की वैज्ञानिक जानकारी —

आज के वैज्ञानिक भी विज्ञान की इस शाखा को बहुत महत्व की मानते हैं, क्योंकि यही एक शास्त्र ऐसा है जो हमें इस बात का विश्वास दिलाता है कि विज्ञान के नियम केवल पृथ्वी पर ही नहीं बल्कि अथाह अंतरिक्ष में भी लागू होते हैं।

तारों की रचना, उनके तेज का रहस्य, उनमें समयानुसार होने वाले परिवर्तन, उनका विनाश — इन बातों का अध्ययन आज भौतिकी के नियमों द्वारा संभव है। आधुनिक ज्योतिषशास्त्र का यह विषय एक महत्वपूर्ण एवं सफल अंग माना जाता है।

इसी की झलक आप देखेंगे इस छोटी सी पुस्तिका में।

— जयंत नार्लीकर

परिचय

जयंत नार्लीकर

प्रो. जयन्त विष्णु नार्लीकर का जन्म कोल्हापुर, महाराष्ट्र में 19 जुलाई 1938 को हुआ। इन्होंने अपनी प्रारम्भिक शिक्षा वाराणसी से प्राप्त की, जहाँ उनके पिता श्री वी. वी. नार्लीकर, बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय में गणित के प्रोफेसर थे। ततपश्चात् उच्च शिक्षा के लिए वे कैम्ब्रिज गये। कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय में वे 1959 में रैंगलर बनें एवं 1960 की अंतिम परीक्षाओं में उन्होंने विशेष योग्यता हासिल की। उन्हें खगोल विज्ञान के लिए टाइसन पदक भी मिला। 1960 में ही वे प्रो. फ्रेड हॉयल के मार्गदर्शन में अनुसंधान करने लगे।

प्रो. नार्लीकर ने अपने कैम्ब्रिज के पन्द्रह वर्षीय कार्यकाल (1957–1972) के दौरान बी. ए., एम. ए. और प. एच. डी. की उपाधियाँ प्राप्त कीं। 1976 में उन्हें विशिष्ट अनुसंधान के लिए कैन्टाब की डाक्टर ऑफ साइन्स की उपाधि प्रदान की गई। 1963 में उनका चयन किंग्स कालेज के फेलो के रूप में हुआ तथा 1967 में वे कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय के इन्स्टीट्यूट ऑफ थिअरेटिकल एस्ट्रोनामी के सदस्य बन गये। कैम्ब्रिज में रहते हुए उन्हें कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय के स्मिथ पुरस्कार (1962) और एडम पुरस्कार (1967) से सम्मानित किया गया।

प्रो. नार्लीकर 1972 में टाटा मौलिक अनुसंधान संस्थान (TIFR) में प्रोफेसर के रूप में भारत आये, जहाँ वे सैद्धांतिक खगोल विज्ञान ग्रुप की अध्यक्षता करते रहे हैं।

1973–75 में वे जवाहर लाल नेहरू फेलो थे तथा 1979–80 में वे विश्वविद्यालय अनुदान आयोग (UGC) के राष्ट्रीय प्रवक्ता थे।

प्रो. नार्लीकर का फ्रेड हॉयल के साथ प्रारम्भिक कार्य, ब्रह्मांड की स्थिर अवस्था सिद्धांत पर था। प्रो. नार्लीकर 1974 में भारतीय विज्ञान अकादमी और 1977 में भारतीय राष्ट्रीय विज्ञान अकादमी में फेलो नियुक्त हुए। वे कैम्ब्रिज दार्शनिक सोसायटी के भी फेलो हैं।

वे भारतीय भौतिक संगठन और भारतीय खगोलीय सोसायटी के भी सदस्य हैं। उन्हें विज्ञान संस्थान, बंबई द्वारा 1973 में गोल्डन-जुबली स्वर्ण पदक द्वारा सम्मानित किया गया। 1978 में उन्हें भौतिक विज्ञान के लिए 'शांति-स्वरूप भटनागर' पुरस्कार से भी सम्मानित किया गया।

1983 में इनका चुनाव रॉयल एस्ट्रोनामिकल सोसायटी, लंदन के एसोसिएट के रूप में हुआ। एफ. आई. ई. फाउन्डेशन ने उन्हें मई 1983 में अपने सबसे बड़े सम्मान, राष्ट्रभूषण पुरस्कार से सम्मानित किया।

विषय क्रम

गांधी जी का जन्तर

तुम्हें एक जन्तर देता हूं। जब भी तुम्हें सन्देह हो या तुम्हारा अहम् तुम पर हावी होने लगे, तो यह कसौटी आजमाओ :

जो सबसे गरीब और कमजोर आदमी तुमने देखा हो, उसकी शकल याद करो और अपने दिल से पूछो कि जो कदम उठाने का तुम विचार कर रहे हो, वह उस आदमी के लिए कितना उपयोगी होगा। क्या उससे उसे कुछ लाभ पहुंचेगा? क्या उससे वह अपने ही जीवन और भाग्य पर कुछ काबू रख सकेगा? यानि क्या उससे उन करोड़ों लोगों को स्वराज्य मिल सकेगा जिनके पेट भूखे हैं और आत्मा अतृप्त है?

तब तुम देखोगे कि तुम्हारा सन्देह मिट रहा है और अहम् समाप्त होता जा रहा है।

उपोद्घात

अंतरिक्ष की नीरव शांति को भंग करता हुआ वह आकाशयान तेज़ी से अपने लक्ष्य की ओर बढ़ रहा था। लक्ष्य था एक तारा एवं उसके आस पास के नौ ग्रह। यान में केवल तीन जीव थे जो इस लंबी यात्रा के दौरान जमी हुई अवस्था में गहरी नींद में सोये थे। लेकिन एक पूर्व नियंत्रित सूचना द्वारा यान के कंप्यूटर ने उन्हें जगा दिया।

"तीसरे ग्रह में बुद्धिमान जीवों का अस्तित्व है," कंप्यूटर ने अपने टर्मिनल पर जानकारी दी, "*वहाँ दूरसंचार के लिए इस्तेमाल की जाने वाली सूक्ष्म लहरों का* आभास मुझे मिल रहा है।"

यान के नायक ने टर्मिनल के बटन दबाकर कुछ सूचनाएँ दीं जिनकी बदौलत यान उस तीसरे ग्रह के चारों ओर चक्कर लगाने लगा। उस ग्रह का एक उपग्रह एक निकटतर कक्षा में घूम रहा था।

"करटक और दमनक" नायक ने अपने सहयात्रियों को बुलाया।

"उपस्थित हैं" दोनों एक स्वर से बोले।

"अब तुम्हारे काम का समय आ पहुँचा है" यह कहकर नायक ने उन्हें अपेक्षित कार्य की जानकारी देना प्रारंभ किया। कुछ बटन दबाकर उसने टर्मिनल पर उस गोलाकार ग्रह का दूरदर्शी चित्र देखा . . . नीला सा सुहावना गोला, जिसकी ओर देखते हुए वह बोला "वहाँ जीवों का अस्तित्व है जिनकी जानकारी हमें चाहिए। वे कैसे है . . . किस प्रकार अपने को जीवित रखते हैं . . . सारांश में

उनके जीवन का पूरा चित्र तुम्हें प्राप्त करना होगा।"

"जो आज्ञा" दमनक बोला। करटक मौन था।

"तुम दोनों को स्पेस-कैप्सूल से मैं उस ग्रह पर उतारूँगा। तुम्हें वहाँ जीवित रखने के लिए आवश्यक सामग्री तुम्हारे पास रहेगी। तुम खुद अदृश्य रहोगे जिससे ग्रहवासियों को तुम्हारे अस्तित्व का पता न चले। तुम्हारी सभी कार्रवाइयाँ निरीक्षक की होंगी . . . उनके जीवन में हस्तक्षेप मत करना। तुम संदेश प्रक्षेपक के द्वारा मुझसे किसी भी समय बात कर सकते हो। बेहतर यह होगा कि तुम दोनों अलग-अलग मार्ग से ये जानकारियाँ प्राप्त करो। जब तुम्हारा काम समाप्त हो जाए तब मुझे संदेश भेजना . . . मैं तुम्हें वापस बुला लूँगा। क्या यह सब स्पष्ट है?" नायक ने पूछा।

"जी! लेकिन इस जानकारी को प्राप्त करने में काफी समय लग सकता है।" दमनक बोला।

"उसकी चिंता मत करो। इस ग्रह को अपने तारे का एक चक्कर पूरा करने में जो समय लगता है उसका सौगुना समय तुम बिना किसी कष्ट के वहाँ बिता सकोगे। . . . करटक?"

करटक मुस्करा रहा था। "जी, मेरा अनुमान है कि यह जानकारी शीघ्रता से प्राप्त की जा सकती है।"

"असंभव! मैं एक जीव का जन्म से मृत्यु तक अवलोकन करूँगा। पता नहीं कितनी अवधि इसमें लगे।" दमनक बोला।

"जैसा कि मैंने अभी बताया तुम दोनों अपने अलग-अलग मार्ग से जो उचित समझो वही करो . . . वहाँ जाकर क्या उचित है यह तुम्हें ही निश्चित करना है।"

करटक और दमनक तैयारियों में जुट गये।

अपनी जानकारी लेकर करटक शीघ्र ही लौटा। फिर नायक के साथ वह दमनक की प्रतीक्षा में लग गया।

आखिर दमनक भी लौटा . . . तब तक वह ग्रह अपने तारे के सत्तर चक्कर

लगा चुका था।

"बहुत देर लगाई तुमने, भाई दमनक" करटक बोला।

"देर ? जैसा मैंने बताया था, मैंने एक मानव की संपूर्ण जीवनी देखी। पूरी सत्तर साल की। एक साल में ग्रह अपने तारे का एक चक्कर लगाता है। देखिये, पूरा विवरण लेकर आया हूँ।" दमनक ने नायक को अपनी रिपोर्ट सौंपी। फिर पूछा "यह करटक कब लौटा?"

"एक साल बाद", नायक बोला।

"भला एक साल में इसे क्या जानकारी मिली होगी? यह अवधि तो बहुत ही कम है इन जीवों की आयु के मुकाबले . . ."

करटक मुस्कराया पर मौन रहा। आखिर नायक बोला, "बहुत कुछ जानकारी लाया है यह। मेरे अनुमान से तुमसे कहीं अधिक उपयोगी साबित होगी इसकी जानकारी।"

"मुझे यकीन नहीं आता", दमनक सिर हिलाते हुए बोला।

"करटक तुम ही समझाओ अपनी कार्य प्रणाली — देखें किसकी प्रणाली अधिक सक्षम है" नायक बोला।

"नहीं मैं प्रार्थना करता हूँ कि आप पहले दमनक का किस्सा सुनें", करटक की यह अरजी नायक ने स्वीकार कर ली और उसने दमनक से अपनी खोज के बारे में बताने को कहा। दमनक बोला:

मैं सीधे एक प्रसूति ग्रह गया जहाँ मानव पैदा होते हैं। एक बच्चे का जन्म होते मैंने देखा और तब से मैंने उसका निरीक्षण किया। बढ़ती आयु के साथ उसमें कैसे परिवर्तन होते गये, वह किशोरावस्था से युवावस्था, फिर अधेड़ होते हुए बूढ़ा किस प्रकार होता गया और फिर उसकी मृत्यु कैसे हुई इन बातों का पूरा ब्यौरा मैं लाया हूँ। एक मानव की पूरी कहानी आप पायेंगे मेरे विवरण में।"

नायक ने सिर हिलाया मानो उसे इस उत्तर से संतोष न हुआ हो। वह बोला "पूरी कहानी, लेकिन एक ही मानव की . . : वह भी सत्तर सालों के बाद।

दमनक, तुम भी यह मान लोगे कि सभी मानव एक जैसे नहीं होते . . . हमारी अपनी जीव सृष्टि की तरह उसमें भी विविधता है। करटक अब तुम सुनाओ अपनी कहानी।" करटक ने सिर झुकाकर कहना शुरू किया:

"मैं यहाँ से एक ऐसी जगह गया जिसे शहर कहते हैं . . . जहाँ मानवों का एक विशाल समूह था। लगभग दस लाख के इस समूह में मैंने विविध अवस्थाओं में मानवों का निरीक्षण किया। कुछ थे नवजात शिशु . . . फिर दमनक की बताई सभी दशाओं में मैंने मानवों को देखा। उनकी विविधताएँ देखीं। उँचे-नाटे, काले-पीले-गेहुँए-गोरे, लंबे बालों वाले, गंजी खोपड़ी वाले, दुबले-पतले-तंदुरुस्त-मोटे . . . मैं यह भी आज़मा पाया कि कैसे बढ़ती आयु के साथ शिशु की ऊँचाई एवं वजन बढ़ता है, कहाँ तक ऊँचाई का बढ़ना जारी रहता है और कब वह स्थिर अवस्था में आती है, कैसे बूढ़ों के शरीर की कमज़ोरियाँ बढ़ती जाती हैं, बाल गिरते हैं . . . सभी मानवी विविधताएँ मैंने एक शहर में देखीं और फिर ग्रह के अनेक भागों के मानवी समूहों का निरीक्षण किया, यह देखने के लिए कि वर्ण आदि के कारण इन समूहों में क्या भेद हैं और फिर मूल समानताएँ क्या हैं।"

"पर, यह जानकारी मैंने जिस गौर से एक मानव का निरीक्षण किया है, उसका मुकाबला नहीं कर सकती!" दमनक ने टिप्पणी करते हुए कहा "करटक हमें किसी एक मानव की पूरी जीवनी नहीं बता सकता भले ही वह मानव समुदाय का सर्वांगीण चित्र पेश करता हो।"

"लेकिन वही जानकारी तो हमें अपेक्षित थी, दमनक जब हम इस ग्रह पर जहाँ जीव सृष्टि है फिर आयेंगे . . . तब वहाँ के निवासियों की मानवों की सर्वांगीण जानकारी जो करटक लाया है हमें बहुत लाभदायक साबित होगी। तुम्हारी लाई जानकारी एक मानव विशेष के बारे में है . . . मानव समुदाय के बारे में नहीं। और तुमने यह भी देखा कि करटक अपना कर्तव्य कितने कम समय में निभा सका।"

नायक के शब्दों के आगे दमनक निरुत्तर था।

1

तारों की दुनिया में

खुले आकाश में सूर्यास्त के बाद हमें तारे दिखाई देने लगतें हैं। सूर्य के क्षितिज के नीचे जाने पर भी कुछ समय तक आकाश पर हल्का सा प्रकाश छाया रहता है। जब वह प्रकाश भी लुप्त होने लगता है तब क्रमशः तारे आकाश के पर्दे पर दिखलाई देने लगते हैं। वे कहाँ से आते हैं?

तारे किसी एक जगह से नहीं आते हैं और न ही वे एकाएक आकाश में प्रकट होतें हैं। वे अंतरिक्ष में मौजूद रहते हैं पर सूर्य की चमक-दमक के आगे उनका तेज फीका पड़ जाता है और वे दिन में दिखाई नहीं देते। इतना ही नहीं जैसा कि हम अनुभव करते हैं चंद्रमा के धीमे प्रकाश में भी कई तारे लुप्त हो जाते हैं। एक संस्कृत सुभाषित है:

वरमेको गुणी पुत्रो न च मूर्खः शतानपि।
एकः चंद्रस्तमोहंति न तु तारागणः शतम्।।

अर्थ है: सौ मूर्ख पुत्रों से एक गुणवान् पुत्र बेहतर है . . . देखो, एक चन्द्रमा अंधकार दूर कर सकता है जिस काम को सैकड़ों तारे नहीं कर पाते।

वास्तव में कवि ने इस श्लोक में तारों के प्रति अन्याय किया है। जैसा कि हम आगे देखेंगे तारे बहुत प्रकाशवान होते हैं। सूर्य भी एक तारा ही है, केवल निकट होने के कारण वह बहुत तेजस्वी लगता है। जैसे सौ वाट पावर के बल्ब को एक फुट की दूरी से देखने का अगर हम दुस्साहस करें तो हमारी आँखें चकाचौंध हो जायेंगी किन्तु वही बल्ब सौ मीटर की दूरी से देखने पर कितना मंद लगेगा। इसी प्रकार आकाश में दिखाई देने वाले तारों में कई तारे सूर्य से भी कई गुना प्रकाशवान हैं, लेकिन बहुत दूर होने के कारण वे मंद लगते हैं। . . . और चन्द्रमा ? उसका प्रकाश तो खुद उसका अपना नहीं है बल्कि सूर्य का बिखराया प्रकाश है।
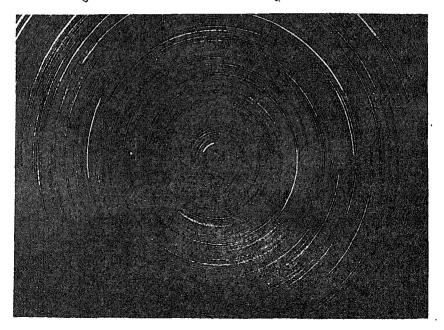
चित्र 1. **भारत की कावलूर वेधशाला से खींचा गया चित्र इसमें गोलार्ध के तारों की गोलाकार कक्षाएँ दिखाई दे रही हैं।** (इंडियन इंस्टिट्यूट ऑफ ऐस्ट्रोफिजिक्स की अनुमति से)

ध्रुव तारा

प्राचीन काल से तारों के दर्शन करने वालों ने कई महत्व की बातें देखीं। उन्होंने देखा कि अधिकांश तारे सूर्य की तरह पूरब से उदय होकर पश्चिम दिशा में अस्त होते हैं। इसलिए यदि तुम कैमरा शटर रात भर खुला रखकर आकाश का फोटो खींचोगे तो तुम्हारे फोटो में तारे नज़र नहीं आयेंगे। वहां नजर आयेंगी गोलाकार कक्षाएँ जैसी कि चित्रक्रमांक- 1 में हैं। यह चित्र दक्षिणी-गोलार्ध की एक वेधशाला में लिया गया है।

यदि ऐसा ही फोटो उत्तरी-गोलार्ध में खींचा जाय तो तुम देखोगे कि केवल एक तारा कक्षा में घूमने के बजाय स्थिर नज़र आयेगा। यही है ध्रुव तारा जिसको हमारी पौराणिक कथाओं में महत्व का स्थान प्राप्त है। ध्रुव की कहानी संक्षेप में इस प्रकार है।

राजा उत्तानपाद की दो रानियाँ थीं — सुनीति और सुरुचि, जिनमें सुरुचि उन्हें अधिक प्रिय थी। एक दिन सुरुचि के पुत्र उत्तम को अपने पिता की गोद में बैठे देखकर सुनीति के पुत्र ध्रुव ने भी वहाँ बैठना चाहा परन्तु सुरुचि ने उसे वहाँ से जबर्दस्ती हटा दिया। इस घटना से क्षुब्ध होकर बालक ध्रुव ने भगवान शंकर की कडी तपस्या की। आखिर भगवान प्रसन्न होकर बोले "बेटा वर माँग।" तो ध्रुव ने ऐसे स्थान की माँग की जहाँ से उसे हटाया न जा सके। वही है ध्रुव तारा जो आकाश में आज भी अटल मालूम पड़ता है।

ऐसी खास प्राकृतिक घटना को, जिसका कारण विज्ञान द्वारा नहीं मिलता, ऐसी लोक कथाओं में गढ़ा जाता है। लेकिन जैसे-जैसे विज्ञान उन्नति करता जाता है, कारण मीमांसा भी आगे चलकर हो ही जाती है और फिर लोक कथा केवल एक मनोरंजक कहानी के रूप में ही रह जाती है।

ध्रुव तारा अटल क्यों प्रतीत होता है ? इसका कारण हमें चित्र क्र. 1 की कक्षाओं से मिलता है। ये सभी कक्षाएँ गोलाकार क्यों हैं ? दो हजार साल पहले यूनानी निरीक्षकों की यह धारणा थी कि पृथ्वी के चारों ओर ब्रह्माण्ड एक गेंद के

रूप में फैला हुआ है और यह गेंद एक धुरी पर घूमती है। इस धारणा के अनुसार तारे इस गेंद पर चिपके प्रकाश स्रोत हैं जो गेंद के साथ-साथ घूमते हैं। ध्रुव तारा गेंद की धुरी पर होने के कारण नहीं घूमता। (एक गेंद को किसी भी व्यास के चारों ओर घुमाकर देखो। गेंद की सतह पर दो बिंदु ऐसे मिलेंगे जो सदा स्थिर रहते हैं।)

पाँचवी सदी में जन्मे भारतीय ज्योतिर्विद आर्यभट्ट ने इस धारणा का खंडन किया था। अपने ग्रंथ आर्यभटीय में उन्होंने यह दलील दी:

> अनुलोमगतिर्नौस्थः पश्चत्यचलं विलाभगं यद्वत्।
> अचलानि भानि तद्वत् समपश्चिमगानि लंकायाम्।।

इस श्लोक का अर्थ इस प्रकार है: जिस प्रकार नदी के तट पर स्थित स्थिर वस्तुओं (पेड़, मकान, आदि) को नाव में बैठा व्यक्ति उल्टी दिशा में जाते देखता है उसी प्रकार स्थिर तारे पृथ्वी से देखने पर पश्चिम दिशा में जाते दिखाई देते हैं। इसलिए आर्यभट्ट का यह दावा कि ब्रह्माण्ड के तारे स्थिर हैं और हमारी पृथ्वी ही अपनी उत्तर-दक्षिण धुरी पर घूमती है, सही है।

घूमती पृथ्वी से देखने पर सभी तारे घूमते नज़र आते हैं। लेकिन तत्कालीन एवं आर्यभट्ट के बाद के विद्वानों ने सही दलील का समर्थन नहीं किया और दुर्भाग्य से इस विचार-धारा को दस शताब्दियों तक उपेक्षित रहना पड़ा। सोलहवीं सदी में कोपर्निकस के विचारों का प्रभाव जैसे-जैसे बढ़ने लगा वैसे-वैसे स्थिर पृथ्वी की कल्पना दोलायमान होती गयी।

आज हम यह जानते हैं कि पृथ्वी एक लट्टू की तरह अपनी धुरी पर चारों ओर घूमती है, और यह धुरी उत्तर दिशा में ध्रुव तारे की ओर है। हाँ, इस लट्टू के उदाहरण में एक और तथ्य भी छिपा है। जब तुम एक लट्टू को घुमाते हो तो क्या उसकी धुरी स्थिर रहती है ? नहीं। वह भी धीरे-धीरे शंकु बनाते हुए घूमा करती है। इसी तरह पृथ्वी की धुरी भी अंतरिक्ष में स्थिर नहीं है। वह भी धीरे-धीरे घूमती हुई लगभग 20000 वर्षों में एक चक्कर पूरा करती है। इसका मतलब यह हुआ कि

सर्वदा यह धुरी ध्रुवतारे की ओर नहीं रहेगी। जैसा हम चित्र क्रमांक 2 में देखते हैं करीब 5,000 वर्ष पहले पृथ्वी वासियों को ध्रुव तारा भी घूमता नजर आता होगा क्योंकि उस समय अटल स्थान था थुबैन तारे का। इसी प्रकार भविष्य में 11,000 वर्षों के उपरान्त ध्रुव के बजाय वेगा अटल तारा होगा।

चित्र 2. पृथ्वी की उत्तर दक्षिण धुरी का अंतिरक्ष में घूमना। पूरी परिक्रमा करने में उसे लगभग 26000 वर्ष लगते हैं। थुबैन तारा पहले ध्रुव के समान इस धुरी पर था जबकि भविष्य में यह स्थान वेगा तारा लेगा। तुलना के लिए एक लट्टू का घूमना देखें।
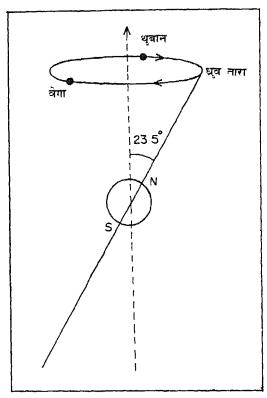
पृथ्वी इस प्रकार क्यों घूमती है इसका स्पष्टीकरण हम गणित द्वारा दे सकते हैं। यह वही गणित है जो न्यूटन के गति के सिद्धांतों पर आधारित है और जिसके द्वारा हम लट्टू की घुमावट को भी समझ सकते हैं।

ग्रह और तारे

यदि हम आकाश के तारों को ध्यान से देखें और कई महीने अपने निरीक्षणों को जारी रखें तो हमें एक और बात दिखाई देगी। वह यह कि सामान्यत: हर तारा अपने पड़ोसी तारों की पृष्ठ-भूमि में स्थिर दिखाई देगा। यानी तारों के पर्दे पर कुछ इने

गिने अपवाद छोड़कर, सभी तारे स्थिर रहते हैं : केवल (जैसा हमने अभी देखा) पृथ्वी के घूमने के कारण यह तारा पटल पूर्व से पश्चिम को सरकता नज़र आता है।

जो इने गिने अपवाद हैं उन्हें ग्रह कहते हैं। यूनानी निरीक्षकों ने ग्रहों को "प्लॉनेट" यानी घुमक्कड़ कहा। क्योंकि उन्हें इनकी गति में अनियमितता दिखाई दी। तारा पटल पर, या सूर्य की दिशा से तुलना करने पर ग्रह कभी आगे कभी पीछे जाते दिखाई देते हैं। ऐसा क्यों होता है ? और ये अपवादात्मक ग्रह क्या हैं ? ऐसे प्रश्न सहसा मन में उठते हैं। चित्र क्रमांक 3 से इन्हीं ग्रहों की अनियमितता का आभास मिलता है।
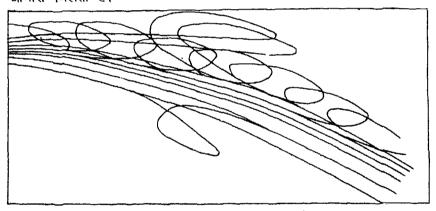
चित्र 3. **ग्रहों की गतियाँ तारों के मुकाबले आगे पीछे हो जाती हैं। उनकी मार्ग रेखाओं में इस कारण गाँठें पड़ जाती हैं। चित्र में ग्रह-कक्षाओं के नमूने।**

मानव स्वयं को विचारवान जीव समझता है किंतु प्रत्यक्ष आचरण में अपनी विचारशीलता को सर्वदा काम में नहीं लाता। खास कर जब वह सृष्टि की घटनाओं में विचित्रता पाता है तब वह अक्सर अंधविश्वासों का शिकार हो जाता है जैसे ग्रहों की विचित्र गति को देखकर सामान्य मानव ने यह धारणा बना ली कि इन ग्रहों में कुछ विशेष शक्ति होती है जिसके बल पर वे इधर उधर भटकते हैं।

फिर इसी धारणा ने फलित ज्योतिष को प्रोत्साहित किया। "यदि ग्रहों में कोई खास शक्ति है तो हो सकता है उसका प्रभाव मानव जीवन पर भी पड़ता हो" इस प्रकार की कल्पना से मानव को लगने लगा कि उसके जीवन का नियंत्रण इन ग्रहों के प्रभाव से होता है।

ग्रहों के घूमने की पहेली सुलझी सत्रहवीं सदी में जब योहान केप्लर ने ग्रहों के निरीक्षणों का विश्लेषण करके यह सिद्ध किया कि ग्रह मनमाने नहीं भटकते बल्कि वे नियमित कक्षाओं में सूर्य के चारों ओर घूमते हैं। अपने तीन नियमों द्वारा केप्लर ने ग्रहों की गति का पूरा-पूरा विवरण दिया और उसी सदी में आइजक न्यूटन ने उन तीनों नियमों का संबंध सूर्य के गुरुत्वाकर्षण से जोड़ा। इस प्रकार अब हम जानते हैं कि ग्रह शक्तिवान एवं स्वेच्छाचारी न होकर सूर्य के गुरुत्वाकर्षण द्वारा नियमित कक्षाओं में घूमते हैं। अत: जिस भ्रामक धारणा ने फलित ज्योतिष को प्रोत्साहित किया उसका अब कोई सबूत नहीं रहा।

इस प्रकार ग्रह और तारों का फर्क अब स्पष्ट हो चुका है। हमारे सूर्य के चारों ओर घूमने वाले ग्रह, तारों की अपेक्षा हमारे काफी निकट हैं परंतु तारों की भाँति स्वयं प्रकाशित न होने के कारण दूसरे तारों के ग्रहों को देखना मुश्किल है। यह संभव है कि अन्य तारों की भी ग्रहमालाएँ हों। आगे चलकर हम इस प्रश्न पर फिर चर्चा करेंगे।

ग्रह पास हैं, तारे दूर हैं . . . लेकिन ये दूरियाँ हैं कितनी लंबी ? आइये पहले इस प्रश्न का उत्तर खोजें।

2

तारे हमसे कितनी दूर हैं ?

आज से करीब 2,250 वर्ष पहले की बात है। तत्कालीन विचारधारा के बावजूद यूनान के एक बुद्धिमान ज्योतिर्विद आरिस्टार्कस ने यह दावा किया था कि पृथ्वी स्थिर नहीं है बल्कि वह सूर्य की परिक्रमा करती है। आरिस्टार्कस के मतानुसार सूर्य, अन्य तारों के समान अंतरिक्ष में अटल है।

अपने दावे को सिद्ध करने के लिए आरिस्टार्कस ने एक निरीक्षण किया। इस निरीक्षण के पीछे जो कल्पना थी उसे समझने के लिए हम सब पृथ्वी पर एक प्रयोग करके देख सकते हैं। यह प्रयोग अनजाने में हम कभी न कभी किया भी करते हैं। चित्र क्रमांक 4 से इस प्रयोग की जानकारी मिलेगी।

दूर स्थित वृक्ष को एक व्यक्ति दो स्थानों से देखता है। स्थान A से देखने पर उसे डूबता हुआ सूर्य पेड़ के ठीक पीछे दिखाई देता है लेकिन स्थान B से देखने पर पेड़ की दिशा पश्चिम से बदलकर उत्तर हो गई है। यानी पेड़ जैसी अटल वस्तु की दिशा भी उस व्यक्ति के लिए बदल जाती है।
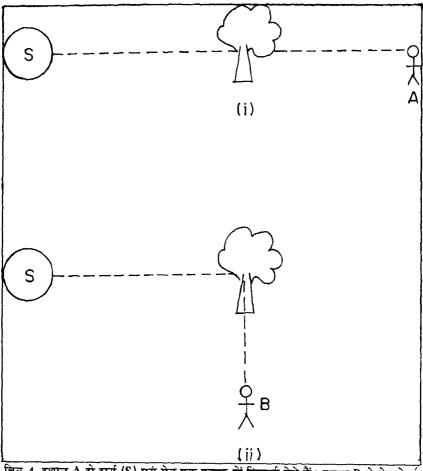
चित्र 4. स्थान A से सूर्य (S) एवं पेड़ एक कतार में दिखाई देते हैं। स्थान B से देखने पर पेड़ की दिशा सूर्य के हिसाब से बदली मालूम पड़ती है।

ठीक इसी नियम के आधार पर आरिस्टार्कस की यह अपेक्षा थी कि परिक्रमा करती हुई पृथ्वी से यदि हम किसी तारे को छः महीने के कालांतर से देखें तो हमें

उस तारे की दिशा में फर्क दिखाई देगा।

लेकिन इन निरीक्षणों से अपेक्षित नतीजा नहीं निकला और इस वजह से आरिस्टार्कस के दावे को निर्णायक सबूत नहीं मिल सका। इसका कारण था कि तारों की वास्तविक दूरी, आरिस्टार्कस की अपेक्षित दूरी से बहुत अधिक है। हमारे चित्र क्रमांक 4 के उदाहरण में दिखाया गया पेड़ यदि बहुत अधिक दूर हो तो स्थान A या B से देखने पर उसकी दिशा में कोई फर्क नहीं महसूस होता है। वह पेड़ एक ही जगह पर स्थिर नज़र आता है। इसी नियम के अनुसार चंद्रमा को किसी शहर के विभिन्न स्थानों से देखने पर भी उसकी दिशा एक ही रहती है अर्थात् बदली हुई नहीं दिखाई देती।

चन्द्रमा की पृथ्वी से दूरी

यूनानी ज्योतिर्विदों ने चन्द्रमा की पृथ्वी से दूरी नापने के प्रयास किये जो
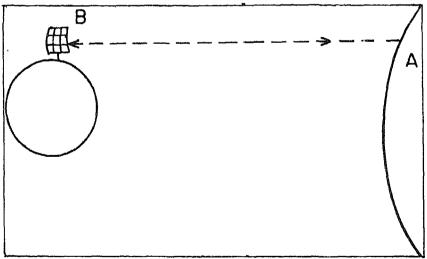
चित्र 5. रेडार किरण पृथ्वी पर A से छूटकर चाँद पर B से टकराकर वापस आती है। इसमें लगभग ढाई सेकंड लगते हैं।

तत्कालीन साधनों की मर्यादाओं को ध्यान में रखते हुए काफी प्रशंसनीय थे।

आजकल चन्द्रमा की दूरी रेडार एवं लेजर के साधनों से नापी जाती है। चित्र क्रमांक 5 में वह विधि दिखाई गई है। रेडार किरण प्रकाश की गति से जाकर चाँद पर टकराकर वापस आती है। आने-जाने का समय अच्छी तरह नापा जा सकता है। उसे प्रकाश के वेग से गुणा करने पर हमें आने जाने की दूरी मालूम हो जाती है जिसकी आधी है पृथ्वी से चाँद की दूरी। यह औसत दूरी है लगभग 3,84,000 किलोमीटर जिसे 100 मीटर की यथार्थता तक नाप सकते हैं।

ग्रहमंडल की दूरियाँ

चाँद की पृथ्वी से दूरी उसकी परिक्रमा के दौरान बदलती रहती है। यह दूरी हमें भले ही अत्यधिक लगे पर चाँद हमारा निकटतम पड़ोसी है। उसकी तुलना में

सारणी- 1

ग्रहों की सूर्य से दूरियाँ

ग्रह	किलोमीटर (करोड़ों में)	अस्ट्रोनॉमिकल यूनिट	प्रकाश के आने का समय
बुध	5.8	0.39	3.2 मिनट
शुक्र	10.8	0.72	6 मिनट
पृथ्वी	14.9	1.00	8 मिनट
मंगल	22.8	1.52	12.6 मिनट
गुरु	77.8	5.20	43.2 मिनट
शनि	142.7	9.55	79.3 मिनट
यूरेनस	286.9	19.2	2 घंटे 40 मिनट
नेपच्यून	449.8	30.1	4 घंटे 10 मिनट
प्लूटो	590.0	39.5	5 घंटे 28 मिनट

सूर्य की हमसे औसतन दूरी लगभग 15 करोड़ किलोमीटर है। इस दूरी को 'ॲस्ट्रोनॉमिकल यूनिट' (A. U.) कहते हैं। ग्रहों की पृथ्वी एवं सूर्य से दूरियाँ नापने के लिए भी जहाँ तक संभव हो सके रेडार एवं ज्यामितीय विधियों का सहारा लिया जाता है।

आज मानव अंतरिक्ष में अन्य ग्रहों के पास यान भेज सकता है। ऐसे यानों में स्थित उपकरणों द्वारा रेडार का प्रयोग करके, ग्रहमंडल की दूरियाँ नापने में उसने सफलता प्राप्त की है। सारणी - 1 में ग्रहों की सूर्य से दूरियाँ, किलोमीटर, ॲस्ट्रोनॉमिकल यूनिट एवं मिनट में दी गई हैं।

मिनटों में दूरी ? इसका अर्थ यही है कि उस दूरी को तय करने में प्रकाश को (या रेडार सिग्नल को जो प्रकाश की गति से जाता है) कितना समय लगेगा। सारणी - 1 से हमें पता लगता है कि सूर्य से शनि तक प्रकाश को पहुँचने में लगभग सवा घंटा लगता है। अगर हम सूरज से शनि के पास स्थित किसी अंतरिक्ष यात्री से बातें करना चाहें, तो हमें प्रत्येक प्रश्न के उत्तर के लिए लगभग ढाई घंटे रुकना पड़ेगा।

इस प्रकार सूर्य के पश्चात् जो तारा हमारे सबसे निकट है (और जिसे "प्रॉक्सिमा सेंटावरी" कहते हैं) वहाँ से प्रकाश को यहाँ तक आने में लगभग सवा चार वर्ष लगते हैं। अन्य शब्दों में हम ऐसा कह सकते हैं कि प्रॉक्सिमा सेंटावरी हमसे सवा चार प्रकाश वर्ष दूर है। वहाँ रेडार सिग्नल के जाने आने का समय साढ़े आठ वर्ष है।

"प्रकाश वर्ष" वह दूरी है जो प्रकाश किरणें एक वर्ष में तय करती हैं। यह दूरी लगभग साढ़े नौ हजार अरब किलोमीटर है। हमसे तारों की दूरियाँ इतनी अधिक हैं कि उन्हें नापने के लिए किलोमीटर की बजाय प्रकाश वर्ष का पैमाना अधिक सुगम है। (जैसे दो शहरों के बीच की दूरी नापने के लिए सेंटीमीटर की बजाय किलोमीटर अधिक सुगम है।)

तारों की दूरियाँ पैरलैक्स द्वारा

यह स्पष्ट है कि तारों की दूरियाँ इतनी अधिक हैं कि हम उन्हें रेडार से भी नहीं नाप सकते। यहाँ हमें ज्यामिति विधि को अपनाना पड़ेगा।

चित्र क्रमांक 4 वाला प्रयोग हम बैठे-बैठे अपनी आँखों से भी कर सकते हैं। एक कलम अपने चेहरे से करीब बीस-पच्चीस सेंटीमीटर आगे रखकर उसे कमरे
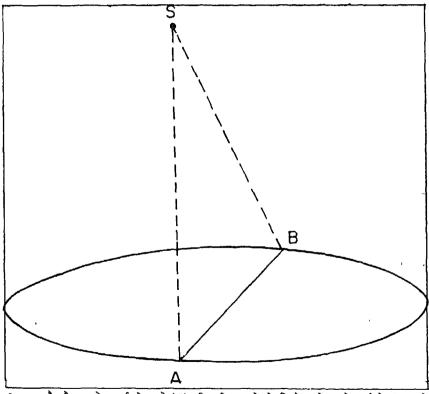
चित्र 6. पैरलैक्स के मार्ग से तारे (S) की दूरी नापने के लिये उसे आधे वर्ष के अंतर से देखते हैं जब पृथ्वी अपनी कक्षा में A और B स्थानों पर थी।

की दीवार पर किसी (चित्र या कैलेंडर जैसे) लक्ष्य की पृष्ठभूमि में गौर से देखें, पहले बाईं आँख बंद करके फिर दाहिनी। कलम दीवार की पृष्ठभूमि पर अपनी जगह बाईं से दाहिनी ओर बदलती मालूम होगी। इसे पैरलैक्स कहते हैं।

तारों की दूरियाँ नापने के लिए हम इसी विधि को काम में ला सकते हैं। कलम की जगह वह तारा (S) जिसकी दूरी हम नापना चाहते हैं, दीवार की जगह, तारा S से भी दूर स्थित तारों की पृष्ठभूमि एवं दो आँखों की जगह पृथ्वी की कक्षा के दो स्थान (A, B) (जैसा कि चित्र क्रमांक 6 में दिखाया गया है) हम ले सकते हैं। A और B से देखने पर S की दिशा में जो अंतर दिखाई देगा उसे हम नापने का प्रयास करेंगे। कोण ASB के अर्धभाग का संबंध हम तारे की दूरी से जोड़ सकेंगे।

ठीक यही तरीका आरिस्टार्कस ने तारों की दूरी नापने के लिए अपनाया था — वहाँ A और B पृथ्वी की कक्षा में दो स्थान थे। परन्तु यह कथन कि "तारों की पृष्ठभूमि में पृथ्वी घूमती है" वे सिद्ध करने में असफल रहे। लेकिन इसका कारण था कि कोण ASB बहुत ही छोटा था इसलिए उसे उपकरण नाप नहीं सके। प्रॉक्सिमा सेंटावरी (जो सूर्य को छोड़कर हमारे सर्वाधिक निकट का तारा है) के लिए इस कोण का आधा भाग अंश के 3600 वें भाग से (जिसे एक "आर्क सेकंड" कहते हैं) छोटा होता है।

सन 1838 में बेसल नामक एक जर्मन ज्योतिर्विद ने पैरलैक्स विधि को सफलता पूर्वक अपनाया। इसी विधि से आसपास के लगभग सात सौ तारों की दूरियाँ आज हम नाप सकते हैं। जिस दूरी पर कोण ASB का अर्धभाग आर्क सेकंड हो उसे एक "पार्सेक" कहते हैं। एक पार्सेक लगभग सवा तीन प्रकाश वर्ष के बराबर है। इस हिसाब से प्रॉक्सिमा सेंटावरी की दूरी लगभग सवा पार्सेक हैं।

आकाश में हम जिन तारों को अपनी आँखों से देख पाते हैं उनमें से अधिकांश तारों की दूरियाँ इतनी अधिक हैं कि उन्हें नापने के लिए पैरलैक्स प्रणाली भी कामयाब नहीं होती। चित्र क्रमांक 6 से हम यह अनुमान लगा सकते हैं कि यदि

तारा S बहुत दूर हो तो कोण ASB बहुत छोटा होगा। करीब 20 से 100 पार्सेक से अधिक दूरी पर स्थित तारों के लिए यह कोण इतना स्वल्प होगा कि हम उसे उपलब्ध उपकरणों से नाप नहीं पायेंगे। इतनी सीमित यानी 20 से 100 पार्सेक दूरी वाले लगभग 700 तारे हैं जिनकी दूरियाँ हम इस उपाय से नाप सकते हैं। लेकिन यहाँ भी संयोग ऐसा है कि इन 700 तारों में से अधिकांश तारे मंद प्रकाश वाले हैं जिन्हें देखने के लिए टेलिस्कोप की आवश्यकता होती है।

आज ऐसी स्थिति है कि जो तारा हम देख सकते हैं-उसकी दूरी पैरलैक्स से नाप नहीं सकते और जिसकी दूरी हम नाप सकते हैं उसे देख नहीं सकते।

100 पार्सेक से अधिक दूर स्थित तारों की दूरियाँ मालूम करने के लिए हमें अन्य मार्गों का सहारा लेना पड़ता है। उन्हें जानने के लिए तारे की तेजस्विता की जानकारी होना आवश्यक है।

□□

3

तारों की तेजस्विता और चमकाहट

जब स्कूल में परीक्षा के उपरांत छात्रों के नंबर देखे जाते हैं तो सबसे अधिक सफलता प्राप्त करने वाले छात्र को पहला नंबर मिलता है और उसके पश्चात् क्रमानुसार कम सफलता वाले छात्रों के नंबर 2, 3, 4. . . . इस प्रकार बढ़ते जाते हैं। कभी-कभी शिक्षक नंबर न देकर अक्षरों का प्रयोग करते हैं, जैसे सर्वोत्तम उत्तर के लिए A और उसके पश्चात् B, C . . . इत्यादि।

जब हम यहाँ से तारों को देखते हैं तो हमें यह महसूस होता है कि सभी तारे एक जैसे प्रकाशवान् नहीं हैं। इसीलिए निरीक्षकों ने तारों को नाम देते समय अक्षरों का प्रयोग किया है। हाँ, ये अक्षर अंग्रेजी (यानी लैटिन) वर्णलिपि के न होकर यूनानी लिपि के हैं। इस प्रकार किसी तारकापुंज के सर्वाधिक प्रकाशवान् तारे का यूनानी आधक्षर "अल्फा" (α) से, उसके बाद वाले तारे को "बीटा" (β) . . . इत्यादि नामों से दर्शित किया जाता है। उदाहरण के लिए "सिरियस" को व्याघ्र तारा, केनिस मेजारिस को बृहल्लुब्धक तारकापुंज का सर्वाधिक प्रकाशवान् तारा होने के नाते "अल्फा केनिस मेजारिस" कहा जाता है।

इसके अतिरिक्त अन्य विधियों से भी तारों के नाम निरीक्षकों ने दिये हैं। उनके कैटलाग बनाये हैं जैसे कि पुस्तकालयों में हम पुस्तकों के कैटलाग देखते हैं। इन नामों की चर्चा करने से बेहतर यह होगा कि हम यह जान लें कि तेजस्विता के अनुसार तारों के नंबर किस प्रकार लगाये जाते हैं।

तेजस्विता का मैग्निट्यूड स्केल

जब किसी परीक्षा के नतीजे में छात्रों को अंक दिये जाते हैं तब साधारणतः हम यह देखते हैं कि सर्वप्रथम छात्र को दूसरे क्रमांक के छात्र से कितने अंक अधिक मिले, दूसरे को तीसरे से कितने अधिक मिले इत्यादि। इसी आधार पर जब हम तेजस्विता के अनुसार तारों को क्रम से लगाते हैं तब हम यह देखते हैं कि क्रम में पहले नम्बर एक का तारा दूसरे नंबर के तारे से कितने गुना अधिक तेजस्वी है, और दूसरा तीसरे से कितने गुना इत्यादि।

इसका यह कारण है कि दो तारों की तेजस्विता की तुलना यदि हम उन्हें देखकर करना चाहें तो यह हम तेजस्विताओं के अनुपात द्वारा अधिक आसानी से कर सकते हैं। जैसे कि दो बिजली के बल्बों की चमक की तुलना हम उनके पावरों के अनुपात से करते हैं, उनके अंतर से नहीं। उदाहरण के लिए, यदि हमारे पास हज़ार और दस पावर के दो बल्ब हों तो हम उनकी तुलना करते हुए यह कहते हैं कि पहला बल्ब दूसरे बल्ब से सौ गुना अधिक तेजस्वी है। हम ऐसा नहीं कहते कि पहले बल्ब से दूसरे की अपेक्षा 990 वाट पावर अधिक आती है।

बिजली के बल्ब की तेजस्विता हम वाट में नापते हैं। एक वाट के बल्ब से प्रति सेकंड एक जूल ऊर्जा निकलती है। इस तुलना में सूर्य से चालीस करोड़ अरब वाट पावर आती है। किसी अन्य तारे की तेजस्विता की तुलना, सूर्य की इस तेजस्विता से करते समय हम दोनों का अनुपात नापते हैं।

इस अनुपात को नापने के लिए पागसन नामक ज्योतिर्विद द्वारा 1850–60 में निश्चित किये गये मैग्निट्यूड स्केल को अपनाया गया है। इस स्केल पर पोलक्स

(प्लक्ष) तारे की तेजस्विता प्रथम स्थान पर पहुँचती है। यदि प्रथम स्थान के तारे की तुलना में किसी मंद तारे की तेजस्विता एक शतांश हो तो इस स्केल पर उसे छठवाँ स्थान मिलता है। इसी नियम से जहाँ भी दो तारों की तेजस्विता का अनुपात एक शतांश होता है वहाँ मंद तारे का मैग्निट्यूड तेजस्वी तारे के मुकाबले पाँच से अधिक होता है।

इस प्रकार मैग्निट्यूड स्केल पर बढ़ते क्रम का मतलब बढ़ती मंदता या घटती तेजस्विता है। हर एक मैग्निट्यूड में तेजस्विता एक निश्चित अनुपात में घटती है। यदि इस अनुपात को हम a कहें तो पहले से छठें स्थान तक पहुँचते-पहुँचते यह अनुपात $a \times a \times a \times a \times a$ हो जाता है। लेकिन जैसा हमने अभी देखा कि यह अनुपात एक शतांश (1/100) है। गणित हमें यह बताता हैं कि a लगभग 0.4 के बराबर है।

सूर्य का मैग्निट्यूड लगभग 5 है यानि मैग्निट्यूड 1 वाले तारे से सूर्य का मैग्निट्यूड 4 अधिक है। इसका अर्थ है कि प्लक्ष की अपेक्षा सूर्य एक मंद तारा है जिसकी तेजस्विता प्लक्ष की केवल ढाई प्रतिशत है। यह हिसाब तुम आसानी से लगा सकते हो क्योंकि यह अनुपात $a \times a \times a \times a$ है। (साधारणतया किसी भी तारे की तेजस्विता का उसके मैग्निट्यूड से संबंध जोड़ने के लिए हम लागरिद्म गणित का इस्तेमाल करते हैं।)

तारों की चमकाहट

जब हम पृथ्वी से तारों को देखते हैं तब हमें यह यकीन नहीं होता कि प्लक्ष जैसा तारा हमारे सूरज से इतना अधिक प्रकाशवान् है। ऐसा इसलिए है क्योंकि प्लक्ष की दूरी सूर्य के मुकाबले बहुत अधिक होने की वजह से वह यहाँ सूर्य से मंद लगता है। इसलिए इस प्रकार की जानकारी के लिए यह जानना जरूरी है कि तारों की चमक दमक का उनकी दूरी से क्या नाता है।

चित्र क्रमांक 7 में हमने तारे S को केन्द्र मानकर R अर्धव्यास का एक गोला
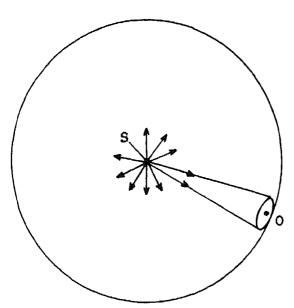
चित्र 7. तारे (S) से निरीक्षक (O) की दिशा में आने वाला प्रकाश दोनों के बीच की दूरी पर निर्भर करता है। तारे का प्रकाश चित्र में दर्शित गोले के पृष्ठ भाग में समान रूप से बँट जाता है .... उसका थोड़ा ही भाग निरीक्षक के हिस्से में आता है।

बनाया है। इस गोले के पृष्ठ भाग पर स्थित किसी भी निरीक्षक की, तारे से दूरी R है। अब कल्पना करें कि O ऐसा एक निरीक्षक है जो तारे से उसकी दिशा में आने वाली ऊर्जा को नाप रहा है।

यदि प्रति सेकंड तारे से L यूनिट ऊर्जा निकलती है तो यही तारे की तेजस्विता है। तारे से दूर जाते हुए यह ऊर्जा उपर्युक्त गोले के पृष्ठ भाग से बाहर निकलेगी। यानी पृष्ठ भाग पर यह समान रूप से बँट जायेगी। ज्यामिति से हम यह जानते हैं कि गोले के पृष्ठ भाग का क्षेत्रफल $4\pi R^2$ है। अर्थात्, क्षेत्रफल की एक इकाई के हिस्से में प्रति सेकंड

$$\ell = L / 4\pi R^2$$

ऊर्जा आती है। जब निरीक्षक O तारे की फोटो लेता है या अन्य उपकरणों से उसकी चमकाहट देखता है तब वह वास्तव में ℓ ही नापता है, L नहीं।

उपर्युक्त समीकरण से यह स्पष्ट है कि यदि किसी तारे को हम अधिकाधिक दूरी से देखें तो उसकी चमकाहट क्यों कम होती दिखाई देती है। यदि R को हम दस गुना बढ़ाएँ तो ℓ का मूल्य सौवें भाग तक घटेगा। चूँकि प्लक्ष तारे की दूरी सूरज की अपेक्षा 22 लाख गुना अधिक है, इसलिए वह यहाँ से बहुत मंद प्रतीत होता है।

यहाँ बैठे-बैठे हम तारे की तेजस्विता (L) को तो नाप नहीं सकते परन्तु उसकी चमकाहट/ℓ को नाप सकते हैं। हाँ, यदि हम पैरलैक्स विधि से R का मूल्य मालूम कर सकें तो इस समीकरण से L को आँका जा सकता है।

ज्योतिर्विदों ने जिस प्रकार मैग्निट्यूड स्केल पर L के घटते मूल्य के क्रम से तारों को क्रम से लगाया उसी प्रकार ℓ के घटते मूल्य के अनुसार भी इन्हें इसी क्रम से लगाया है। इन दोनों का भेद स्पष्ट करने के लिये, तेजस्विता L की मैग्निट्यूड क्रमसंख्या को अब्सोल्यूट मैग्निट्यूड कहते है और चमकाहट ℓ की मैग्निट्यूड क्रम संख्या को अपरंट मैग्निट्यूड।

यह स्पष्ट है कि पृथ्वी से देखने पर सूर्य सर्वाधिक चमकीला तारा दिखाई देता है अतः उसका अपरंट मैग्निट्यूड सबसे कम होगा। प्लक्ष तारे का अपरंट मैग्निट्यूड 1 के निकट है और सूर्य का 27 के निकट।

सारांश में हम यह कह सकते हैं कि यदि हम यह जानना चाहें कि यहाँ से देखने पर तारा कितना चमकीला लगता है तो हमें उसका अपरंट मैग्निट्यूड नापना होगा। परंतु यदि हम उस तारे की तेजस्विता मालूम करना चाहें तो हमें उसकी दूरी को ख्याल में रखकर उसके अब्सोल्यूट मैग्निट्यूड का हिसाब लगाना होगा।

सुदूरस्थित तारों की दूरियाँ

आइये अब हम उस प्रश्न पर विचार करें जो हमने पिछले परिच्छेद में पूछा था: "उन तारों की दूरियाँ कैसे नापी जाती हैं जिनका पैरलैक्स का कोण इतना छोटा होता है कि सही-सही नापा नहीं जा सकता है?" ऐसे तारे, जो लगभग 100

पार्सेक से अधिक दूर स्थित हैं . . ., हमसे वास्तव में कितने दूर हैं यह जानने के लिए ज्योतिर्विद "समानता का सिद्धांत" अपनाते हैं।

इस विधि को समझने के लिए हम एक उदाहरण लेते हैं। कल्पना करो कि तुम्हें दूर एक मोटरकार दिखाई दी और तुम यह जानना चाहते हो कि उसकी लंबाई क्या है। इस प्रश्न का उत्तर तुम समानता के सिद्धांत द्वारा मालूम कर सकते हो, . . . यदि तुम यह मालूम कर सको कि उस कार का मॉडल क्या था। उदाहरण के लिए यदि तुम कार को देखकर इस नतीजे पर पहुँचे कि वह मारूति कार का छोटा वाला मॉडल है तो निश्चित ही उसकी लंबाई उतनी ही होगी जितनी तुम्हारे किसी पड़ोसी की वैसी ही गाड़ी की होगी। फिर पड़ोसी की गाड़ी की लंबाई नापकर तुम उस दूर दिखाई दी कार की लंबाई जान सकोगे।

इसी प्रकार अब कल्पना करो कि किसी सुदूर तारे A को अच्छी तरह से परख कर तुमने यह निश्चित किया कि उसका मॉडल ठीक तुम्हारे पास मौजूद एक तारे B जैसा है। समानता के सिद्धांत द्वारा तुम यह निष्कर्ष निकाल सकोगे कि एक जैसे होने के कारण, A और B की तेजस्विता समान होगी। यानी पृष्ठ 19 पर दिये समीकरण में L का मूल्य A और B दोनों के लिए समान है। चूँकि तारा B हमारे निकट है इसलिए उसकी दूरी हम पैरलैक्स द्वारा नाप सकते हैं। मान लो यह दूरी R_B है। B की चमकाहट भी हम नाप सकते हैं। क्योंकि यहाँ से हम किसी भी तारे का अपरंट मैग्निट्यूड नाप सकते हैं। मान लो B की चमकाहट ℓ_B है। उपर्युक्त समीकरण के अनुसार

$$L = 4\pi R_B^2 \times \ell_B$$

यानी हमें L का मूल्य अब मालूम हुआ। समानता के सिद्धांत से यही मूल्य A की तेजस्विता का भी है।

अब हम A के अपरंट मैग्निट्यूड से उसकी चमकाहट ℓ_A नापते हैं। फिर, जैसा हमने समीकरण B के लिए लिखा वैसा A के लिए भी लिखेंगे।

$$L \approx 4\pi R_A^2 \times \ell_A$$

इस समीकरण में हमें L एवं ℓ_A मालूम हैं अत: R_A मालूम करना बहुत सहज है।

इस विधि को अपनाने से पहले यह जानना आवश्यक है कि कारों की तरह क्या तारों के भी विभिन्न मॉडल हुआ करते हैं?

□ □

4

तारों के रंग और उनकी गर्माहट

उदय होते समय तथा डूबते समय सूर्य टमाटर की तरह लाल रंग का दिखाई देता है, जबकि क्षितिज में ऊपर चढ़ने पर वह पीला दिखाई देता है। ऐसा क्यों होता है ? सूर्य का अपना वास्तविक रंग क्या है ? रात में यदि हम ताराच्छादित आकाश को देखें तो हमें सबसे पहले सभी तारे सुनहले दिखाई देते हैं। पर यदि हम अधिक गौर से देखें तो कुछ तारों में लालिमा तो कुछ में नीलिमा नज़र आती है। उदाहरण स्वरूप बीटलग्यूज (भरत), प्लक्ष एवं सुहेल तारे लाल और अलगाल एवं रीगल जैसे कुछ और तारे नीले मालूम पड़ेंगे। इन रंगों का रहस्य क्या है ?

इन प्रश्नों का उत्तर हम पाएँगे प्रकाश के सामान्य गुणों में . . . क्योंकि तारों की जानकारी हम तक पहुँचाने वाला एकमात्र साधन प्रकाश है। इसलिए सबसे पहले इन गुणों के विषय में जानना बहुत जरूरी है।

इंद्रधनुष के सात रंग

चित्र क्रमांक 8 में प्रदर्शित प्रयोग तुमने कभी न कभी किया ही होगा। सूर्य किरणों को यदि हम शीशे के प्रिज्म से गुज़रने दें तो बाहर निकलने पर वे सात रंगों

में बँटी दिखाई देती हैं। बैंगनी, नील, नीला, हरा, पीला, नारंगी, एवं लाल . . . ये वही रंग हैं जो हमें इंद्रधनुष में भी दिखाई देते हैं।
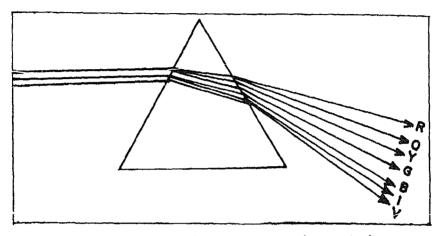
चित्र 8. सूर्य प्रकाश का रंगों में विभक्तीकरण। VIBGYOR ये सात रंगों (बैंगनी, नील, नीली, हरी, पीली, नारंगी, लाल) की किरणें प्रिज़्म से निकलती हैं।

प्रिज़्म या इंद्रधनुष दोनों ही में एक ही प्राकृतिक घटना होती है। जब प्रकाश किरणें एक पारदर्शक माध्यम से दूसरे में प्रवेश करती हैं तो उनकी दिशा बदल जाती है। चित्र क्रमांक 9 में हम देखते हैं कि प्रकाश किरण AB माध्यम I से माध्यम II में जाते समय दोनों माध्यमों की सीमा B पर अपनी दिशा बदलती है और फिर BC दिशा में ही आगे बढ़ती है। यदि हम B पर (हम दोनों माध्यमों के बीच वाली सतह पर) लंब XBY डालें तो कोण ABX आगंतुक कोण तथा कोण CBY वक्रीभूत कोण कहलाता है। यदि माध्यम I हवा हो और माध्यम II शीशा या पानी हो तो कोण CBY, कोण ABX से कम होता है। यानी किरण माध्यम II में प्रवेश करते समय लंब की ओर मुड़ जाती है। इसके विपरीत जब किरण माध्यम II से I में प्रवेश करती है तब लंब से दूर मुड़ जाती है।
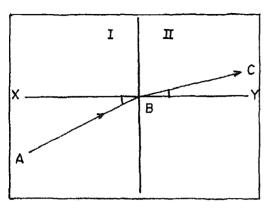
चित्र 9. प्रकाश किरणों के एक माध्यम (I) से दूसरे माध्यम (II) में जाते समय होने वाले मोड़ को वक्रीभवन कहते हैं।

इस घटना को वक्रीभवन कहते हैं। वक्रीभवन का गुण यह है कि विभिन्न रंगों के प्रकाश के मोड़ भिन्न-भिन्न होते हैं। लाल किरणें सबसे कम मुड़ती हैं और बैंगनी सबसे अधिक। सूर्य किरण में सातों रंगों का मिश्रण रहता है, लेकिन जब ये किरणें प्रिज्म से गुजरती हैं तो अपने अलग-अलग मोडों के कारण विभिन्न रंगों की किरणें एक दूसरे से अलग होकर अपने-अपने पट्टों में दिखाई देती हैं। इसी वजह से इंद्र धनुष के सात रंग दिखाई देते हैं। तुमने यह तो देखा ही होगा कि इंद्रधनुष तभी दिखाई देता है जब सूर्य प्रकाश एवं बरसता पानी दोनों मौजूद हों। इन्द्रधनुष में पानी की बूँदें, सूर्य किरणों को मोड़ने वाले प्रिज़्म का काम करती हैं।

सृष्टि की पहेलियाँ सुलझाते-सुलझाते नये-नये प्रश्न सर्वदा उपस्थित होते रहते हैं। जैसे विभिन्न रंगों की प्रकाश किरणें . . . कैसी होती हैं ? और रंगों के अनुसार प्रकाश किरणें कम-अधिक आवर्तित क्यों होती हैं?

विज्ञान के रहस्यों को समझने का यही तरीका है कि ऐसे प्रश्नों के उत्तर खोजते-खोजते उन मूलभूत नियमों तक पहुँचा जाये जिनके द्वारा सृष्टि के व्यापारों पर नियंत्रण होता है।

अब तक प्रकाश के बारे में जो मूलभूत जानकारी हमें मिली है उसका विवरण अब हम देखेंगे।

प्रकाश की तरंगें

यदि तुम किसी तालाब में पत्थर का एक टुकड़ा फेंको तो उसके पानी में गिरते ही पानी की सतह पर लहरें उमड़ती हैं। ये लहरें गोलाकार रूप में उस स्थान से
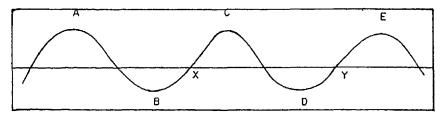
चित्र 10. लहर की उच्चतम एवं न्यूनतम सतहें क्रमश : A,C,E,....तथा B,D,F,.... पर हैं। एक वेवलेंग्थ के दरमियान लहर मध्यम स्तर (जैसे X) से ऊपर उठती है, फिर नीचे गिरती है और फिर उठकर मध्यम स्तर (Y) तक पहुँचती है।

दूर फैलती जाती हैं जहाँ पत्थर गिरा था। अब प्रश्न यह है कि लहरों का आभास हमें कैसे होता है ? जहाँ से लहरें गुज़रती हैं वहाँ पानी की सतह ऊँची नीची होती जाती है। यदि पानी पर पत्तियाँ तैरती हों तो उनकी ऊँचाई में होने वाले परिवर्तन से हम सतह की ऊँचाई-गहराई देख सकते हैं।

ऐसे प्रयोग से तुम्हें यह भी पता चलेगा कि ये पत्तियाँ लहरों के साथ आगे नहीं बढ़ती बल्कि वे अपने स्थान पर ही ऊपर नीचे होती रहती हैं। ठीक इसी उदाहरण को सामने रखकर हम प्रकाश के स्वरूप को समझ पाएँगे। सन् 1873 में ब्रिटेन के वैज्ञानिक जेम्स क्लार्क मैक्स्वेल ने अपनी पुस्तक में इस बात की पुष्टि की थी कि प्रकाश एक विद्युत चुंबकीय लहर है।

इस तथ्य की जानकारी मैक्स्वेल को विद्युत एवं चुंबकीय शास्त्रों के अध्ययन से मिली। जब प्रकाश की किरण आकाश से गुजरती है तब वहाँ विद्युत क्षेत्र एवं चुंबकीय क्षेत्र की तीव्रता कम या अधिक उसी प्रकार होती है . . . जैसे पानी की लहर के ग़ुजरते समय पानी की सतह ऊँची नीची होती है। लोह चुंबक के प्रभाव को

हम चुंबकीय क्षेत्र की तीव्रता से नापते हैं। जैसे-जैसे हम चुंबकीय ध्रुव से दूर जाते हैं इस क्षेत्र की (यानी चुंबकीय आकर्षण की) तीव्रता घटती जाती है। इसी प्रकार विद्युत भार के प्रभाव की तीव्रता विद्युत क्षेत्र से नापी जाती है।

चित्र क्रमांक 10 में एक सामान्य लहर का एक रेखाचित्र दिखाया गया है। यदि हम इसे पानी की लहर समझें तो स्थान, A, C, E, . . . पर सतह सबसे ऊँची है और B, D, . . . पर सबसे नीची। दो लगातार सर्वोच्च बिंदुओं (या निम्न बिंदुओं) के बीच की दूरी को लहर की लंबाई यानी तरंग दैर्ध्य कहते हैं। वैसे ही प्रकाश लहर की तरंग दैर्ध्य विद्युत या चुंबकीय क्षेत्र के तीव्रतम मूल्य वाले दो लगातार स्थानों के बीच की दूरी है।

सूर्य से जो प्रकाश किरणें आती हैं उन सबका तरंग दैर्ध्य समान नहीं होता है। उन्हें नापने की इकाई "ऐंग्स्ट्रॉम" है जो सेंटीमीटर के दस करोड़वें हिस्से के बराबर होता है। मीट्रिक प्रणाली की इकाई है नैनोमीटर यानी मीटर का अरबवाँ भाग। अर्थात् एक नैनोमीटर, दस ऐंग्स्ट्रॉम के बराबर होता है। सूर्य प्रकाश का तरंग दैर्ध्य लगभग 4,000 से 8,000 ऐंग्स्ट्रॉम के बीच यानी 400–800 नैनोमीटर के बीच होता है।

तालिका 2 में हम देखते हैं कि तरंग दैर्ध्य के अनुसार प्रकाश किरणों के रंग होते हैं। लाल रंग की किरणों का तरंग दैर्ध्य सबसे अधिक एवं बैंगनी किरणों का तरंग दैर्ध्य सबसे कम होता है। लेकिन क्या सारणी 2 के अतिरिक्त और भी प्रकाश किरणें होती हैं? हाँ, पर उनके बारे में हम आगे विवरण देंगे।

प्रकाश किरणें हवा से पानी या शीशे में प्रवेश करते समय मुड़ क्यों जाती हैं, इस प्रश्न का उत्तर हमें मैक्स्वेल के विद्युत चुंबकीय शास्त्र के समीकरण हल करने पर मिलता है। हमारा उत्तर इस तथ्य का भी स्पष्टीकरण करता है कि प्रिज़्म सूर्य प्रकाश को सात रंगों में क्यों विभाजित करता है।

इन प्रश्नों का उत्तर इस प्रकार है। हवा से शीशे में जाते समय अधिक तरंग दैर्ध्य वाली किरणें कम मुड़ती हैं और कम तरंग दैर्ध्य वाली किरणें अधिक। यानी

लाल किरणें सबसे अधिक मुड़ती हैं और बैंगनी किरणें सबसे कम। इसी नियम के अनुसार अन्य रंगों की किरणों के मोड़ इन दोनों के बीच होते हैं। चूँकि विभिन्न रंग की किरणें प्रिज़्म द्वारा विभिन्न परिमाण से मोड़ी जाती हैं, इसीलिए वे अलग होकर, चित्र क्रमांक 8 के अनुसार अलग-अलग दिशाओं से निकलती हैं।

सारणी- 2

प्रकाश किरणों के रंग एवं तरंग दैर्घ्य

रंग	तरंग दैर्घ्य नैनोमीटर में *
बैंगनी	390 से 425 तक
नील	425 से 455 तक
नीला	455 से 492 तक
हरा	492 से 577 तक
पीला	577 से 597 तक
नारंगी	597 से 622 तक
लाल	622 से 770 तक

* ये अंक रंगों के भेद लगभग स्पष्ट करते हैं। इनमें कुछ अंतर सम्भव है।

जब प्रकाश किरणें वायु के किसी अणु से या धूल के कण से टकराती हैं तो वे इधर-उधर बिखर जाती हैं। चित्र क्रमांक 11 में हम देखते हैं कि लाल रंग की किरण बैंगनी रंग की किरण से कम बिखरती है। यहां भी हम प्रकाश किरणों के गुण का संबंध उनके तरंग दैर्ध्य से जोड़ पाते हैं।

यही कारण है कि, सतर्कता सूचित करने के लिये लाल प्रकाश इस्तेमाल किया जाता है। कोहरे में या धूलाच्छादित आकाश में लाल किरणें कम से कम बिखरती हुई अधिक दूर तक जा सकती हैं। हरी, नीली, या बैंगनी किरणें इतनी आसानी से

बहुत दूर नहीं जा सकती हैं क्योंकि उनका बिखराव अधिक होता है।

आकाश नीला क्यों है ?

पृथ्वी के चारों ओर एक वायु मंडल है। यदि हम पृथ्वी को एक संतरा मानें तो वायुमंडल इस संतरे के छिलके के समान है जिसकी पृथ्वी तल से ऊँचाई लगभग ढाई सौ किलोमीटर है। पृथ्वी के अर्धव्यास 6,400 किलोमीटर के मुकाबले यह बहुत कम है। पर अनेक विधियों द्वारा इसके परिणाम हम देखते हैं।
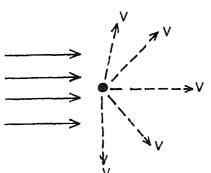
एक परिणाम है आकाश की नीलिमा। दिन में आकाश नीला क्यों दिखाई देता है ? आकाश के नीले होने का कारण यह है कि जब सूर्य की किरणें पृथ्वी पर पहुँचती हैं तो रास्ते में वायुमंडल की वायु एवं धूल द्वारा वे बिखर जाती हैं। जैसा कि हम जानते हैं कि सूर्य प्रकाश के सभी घटक रंगों में से नीले व बैंगनी रंग की

चित्र 11. सूर्य प्रकाश किसी कण पर गिरकर छितरा जाता है। लाल रंग पर यह प्रभाव कम होता है, बैंगनी पर अधिक।

किरणों का सर्वाधिक बिखराव होता है अत: ये बिखरी नीली किरणें हमारी ओर आती हैं। इसी वजह से आकाश नीला प्रतीत होता है।

इस प्रकार सूर्य प्रकाश की सभी किरणों में से (जो सीधी हमारी ओर आती हैं) नीली-बैंगनी किरणों का परिमाण घट जाता है और लाल पीले रंग अधिक

प्रभावशाली हो जाते हैं। अत: सूर्य बिंब हमें यहाँ से उसके वास्तविक स्वरूप से अधिक पीला नजर आता है। जैसे-जैसे सूर्य क्षितिज के निकट आता है (सूर्योदय या सूर्यास्त के समय) वैसे-वैसे सूर्य किरणों को भी वायुमंडल में अधिक फासला तय करना पड़ता है।* इसलिए किरणों का बिखराव बढ़ जाता है और लाल रंग को छोड़कर बाकी अधिकांश रंगों की किरणें बिखर जाती हैं। परिणामत: सूर्य की लालिमा बढ़ जाती है।

अब हम यह जानने का प्रयास करेंगे कि सूर्य एवं अन्य तारों के रंग आते कैसे हैं।

रंग और गर्माहट

इस प्रश्न का उत्तर हमें लोहे के कारखाने में जाकर मिलेगा ! भला लोहे और तारों का क्या संबंध हो सकता है ?

क्या कभी तुमने लोहे की फाउन्ड्री में किसी गरम भट्टी में लोहे की सलाख को गरम होते देखा है। लोहे को गर्म करने पर वह पहले लाल होता है फिर और गर्म होने पर उसकी चमक में पीलापन और फिर सफेदी आने लगती है . . . फिर अधिक तपा भाग नीला दिखने लगता है।

लाल से नीला . . . यही रंग तो इंद्रधनुष में हैं। लगता है गर्मी बढ़ने से वस्तु से निकलने वाला प्रकाश क्रमश: छोटे-छोटे तरंग दैर्घ्य का होता जाता है।

इस प्रयोग का यह परिणाम 1896 में जर्मन वैज्ञानिक विल्हेल्म वीन ने पहले पहल अपने प्रयोगों द्वारा एक सूत्र के रूप में स्पष्ट किया। अब एक ऐसी कल्पना कीजिए कि किसी बंद कमरे में एक भट्टी जल रही है। उस कमरे की दीवारें ऐसी बनाई गई हैं कि वे गरमी बाहर नहीं जाने देतीं। तप्त स्रोत से जो विकिरण निकलेगा वह उन दीवारों से टकराकर कमरे में ही घूमता रहेगा और इसी कारण कमरे के सभी भाग गरम होते जाएँगे। फिर एक स्थिति ऐसी आएगी जब कमरे के भीतर सभी स्थानों का तापमान एक जैसा हो जाएगा।

* चित्र खींचकर इस कथन की पुष्टि करो।

विकिरण का यह गुण है कि वह गर्म से ठंडे स्थान की ओर जाता है। जब सभी स्थानों का तापमान एक जैसा हो जायेगा तब विकिरण का प्रवाह भी रुक जायेगा। ऐसी स्थिति को संतुलन की स्थिति कहते हैं।

इसकी उपमा हम एक उदाहरण से देंगे। मान लो शहर में दो खेल के मैदान आमने-सामने हैं। एक मैदान आम जनता के लिये खुला है पर दूसरा अभी तैयार नहीं है। इसलिए खेलने वालों की भीड़ पहले मैदान में होगी। जब दूसरा मैदान भी तैयार हो जाता है और लोगों के लिए खुलता है तब शुरू में वहां भीड़ कम होगी। लेकिन जैसे-जैसे लोगों को यह पता चलता है कि दूसरा मैदान भी खेल के लिये उपलब्ध है तो सब उधर ही भागेंगे। फिर एक स्थिति ऐसी आ जाएगी कि दूसरे मैदान में पहले मैदान से अधिक भीड़ हो जाएगी। अधिक भीड़ हो जाने पर लोग पहले मैदान की ओर लौटेगें। यह स्थिति कुछ दिन तक चलेगी पर आखिर में ऐसी स्थिति आयेगी कि दोनों मैदानों में समान रूप से भीड़ होगी। यही है संतुलन की स्थिति।

जब हम तंदूर में रोटी पकाते हैं या बिजली के ओवन में केक बनाते हैं तो वहाँ भी यही हाल रहता है। तंदूर या ओवन बंद स्थान हैं जहाँ से गर्मी बाहर नहीं निकल सकती। जितनी कुशलता से ऐसी भट्टियाँ गर्मी को अपने अंदर बंद रख सकेंगी उतनी तेज़ी से भट्टीयों में खाना पक सकेगा। इस प्रकार की भट्टी के अंदर की उष्णता का अंदाज हम बाहर से उसकी दीवारों को छूकर नहीं लगा सकते। दीवार बाहर से ठंडी ही लगेगी।

इस प्रकार बंद किये गये विकिरण को "कृष्णिका विकिरण" (ब्लैक बॉडी रेडिएशन) कहते हैं। कृष्णिका यानी काली वस्तु जो किसी भी प्रकाश (यानी विकिरण) का अभाव दर्शाती है। ऐसी वस्तु के भीतर विकिरण संतुलन की स्थित में होता है जिसका तापमान सर्वत्र एक ही रहता है।

यह विकिरण क्या है ? वास्तव में ये वही विद्युत चुंबकीय लहरे हैं जिनको हम प्रकाश कहते हैं। जो प्रकाश लहरें हम आँखों से देख सकते हैं उनकी तरंग दैर्ध्य

सारणी-2 के अनुसार 4,000 Å – 8,000 Å के बीच होती है। लेकिन इनसे लंबी या छोटी लहरें भी हो सकती हैं। उन्हें मानवी आँखें भले ही न देख पाएँ पर उनका अस्तित्व उपकरणों द्वारा हम जान सकते हैं। सारणी – 3 में ऐसी लहरों की सूची है।

सारणी- 3

विद्युतचुंबकीय लहरों के तरंग दैर्घ्य के अनुसार विभिन्न रूप

रूप	तरंग दैर्घ्य (मीटर में)
रेडियो	0.1 से अधिक
माइक्रोवेव्ह	0.0003 से 0.1 तक
इन्फ्रारेड	8×10^{-7} से 0.0003 तक
दृश्य प्रकाश	4×10^{-7} से 8×10^{-7} तक
अल्ट्रावायलेट	3×10^{-10} से 4×10^{-7} तक
एक्स रे	3×10^{-12} से 3×10^{-10} तक
गामा रे	3×10^{-12} से कम

एक कृष्णिका में सभी तरंग दैर्घ्य की लहरें होती हैं, यानी विकिरण में छोटी, बड़ी सभी लहरों का मिश्रण होता है। यह मिश्रण किस अनुपात में होता है, यह कृष्णिका के तापमान पर निर्भर करता है। वीन ने यह निष्कर्ष निकाला कि किसी भी तापमान पर जो लहरें सर्वाधिक संख्या में उपस्थित होती हैं उनका तरंग दैर्घ्य और तापमान को गुणा करने पर हर बार एक ही उत्तर मिलता है।

वीन का सूत्र इस प्रकार लिखा जा सकता है:

तरंग दैर्घ्य $\times$ तापमान = 0.36697 सेंटीमीटर $\times$ अंश

यहाँ तापमान अब्सोल्यूट स्केल पर केल्विन पैमाने से गिना जाता है। एक अंश

केल्विन (1K) एक अंश सेल्सियस ($1^{0}C$) के बराबर तापमान नापता है किंतु अब्सोल्यूट स्केल का शून्य -273°C पर होता है। यानी बर्फ पिघलने का तापमान अब्सोल्यूट स्केल पर 273K और पानी उबलने का तापमान 373K है। अब वीन के नियम से हम देखते हैं कि सारणी-2 में लाल रंग की किरणों की तरंग दैर्ध्य 600–800 नैनोमीटर के बीच हैं। यदि हम 800 नैनोमीटर तरंग दैर्ध्य लेकर वीन का नियम इस्तेमाल करें तो तापमान आयेगा लगभग 4,500K। इसी हिसाब से नीले रंग के लिये 400 नैनोमीटर तरंग दैर्ध्य तापमान 9,000K के आसपास लेगा।

यानी 4,500K तापमान की कृष्णिका में अधिकतम प्रकाश लाल रंग का होगा और 9,000K तापमान की कृष्णिका में नीले रंग का। साधारण तौर पर हम यह कह सकते हैं कि बढ़ते तापमान के अनुसार कृष्णिका के विकिरण का तरंग दैर्ध्य घटता जाता है और इस नियम से नीले विकिरण वाली कृष्णिका लाल रंग वाली कृष्णिका से अधिक गरम होगी।

यही कारण है कि लोहे की सलाख गरम करने पर पहले लाल और फिर नीली दिखती है।

तारों के तापमान

तुम कहोगे, लोहे की गरम सलाख कृष्णिका थोड़े ही है? लेकिन कृष्णिका का प्रमुख गुण अपने भीतरी विकिरण को भीतर ही रखना है ताकि वह बाहर न जा सके। गर्म करने पर लोहे में से विकिरण बाहर को निकलता है।

यह आक्षेप सही है। परंतु यदि भीतर फँसे हुए विकिरण के मुकाबले बाहर निकलने वाला विकिरण काफी कम हो तो हम उस गर्म वस्तु को लगभग कृष्णिका मान सकते हैं। यही कसौटी मानकर हम लोहे की सलाख को लगभग एक कृष्णिका मान सकते हैं।

तारों का भी यही हाल है। कृष्णिका की तरह सूर्य से निकलता विकिरण उसके

अंदर फँसे विकिरण के मुकाबले बहुत कम है। जैसा हम जानते हैं कि सूर्य के विकिरण में स्थित प्रकाश किरणों में विभिन्न रंगों की किरणों का मिश्रण होता है। यह मिश्रण किस अनुपात में है, ज्योतिर्विद यह नाप कर तथा कृष्णिका से तुलना करके सूर्य के पृष्ठ भाग का तापमान निश्चित कर सकते हैं। इस हिसाब से यह तापमान लगभग 5800K यानी 5527°C है।

जब हम यह तरीका अन्य तारों पर इस्तेमाल करते हैं तो भरत (बीटलग्यूज) या प्लक्ष जैसे लाल तारे सूर्य के मुकाबले ठंडे (तापमान 3000K–4000K के दरमियान) तथा आलगाल एवं राइगेल आदि नीले तारे सूर्य से अधिक तापमान वाले (तापमान 8000K–10000K के दरमियान) मालूम पड़ते हैं।

साधारणत: तारों के तापमान 3500K से 1000K तक होते हैं। इसके अलावा कुछ तारों का तापमान इतना कम होता है अर्थात वे इतने कम गर्म रहते हैं कि उनकी प्रमुख रोशनी इन्फ्रारेड किरणों से आती हैं। और, दूसरी तरफ कुछ ऐसे भी तारे हैं जो अल्ट्रावायलेट या एक्स.किरणें प्रमुख रूप से विसर्जित करते हैं। इन दोनों प्रकार के तारों को हम आँखों से देख नहीं सकते पर अन्य उपायों से उनकी जानकारी प्राप्त कर सकते हैं। तारा जगत की विविधताएँ अनेक हैं, उनमें रंग एवं तापमान की विविधताओं का महत्वपूर्ण स्थान है।

जब कोई ज्योतिर्विद यह कहता है कि सूर्य का तापमान कोई साढ़े पाँच हजार सेल्सियस है तो वह सूर्य के पास पारे का थर्मामीटर नहीं भेजेगा। (वहाँ पारा एवं शीशे वाला थर्मामीटर वाष्पीभूत होकर उड़ जायेगा।) वह सूर्य का विकिरण नापकर यह निष्कर्ष निकालता है।

तारा जगत की विविधताएँ

आइए अब हम उस कहानी की बात करें जो उपोद्घात में दी गई है। कहानी के पात्र करटक और दमनक दोनों (पृथ्वी के बाहर के जीव) मानवों के बारे में जानकारी प्राप्त करने के लिए पृथ्वी पर आते हैं और एक ही काम के लिए अलग-अलग

तरीके अपनाते हैं। दमनक एक मानव का आदि से अंत तक निरीक्षण करता है और उस एक व्यक्ति की पूरी-पूरी जानकारी प्राप्त करता है लेकिन इस निरीक्षण के लिये उसे उस मानव का जीवन काल . . . पूरे सत्तर वर्ष . . . पृथ्वी पर बिताने पड़ते हैं। उधर करटक सभी प्रकार के मानवों का विभिन्न शहरों में निरीक्षण करता है और उनकी विविधताओं का विवरण प्राप्त करता है। इस कार्य के लिये उसे एक वर्ष की अवधि पर्याप्त होती है। यद्यपि उसने एक व्यक्ति की पूर्ण जीवनी नहीं देखी फिर भी मानव की विविध दशाओं को देखकर वह इसका अंदाजा लगा सकता है।

उदाहरण के लिये चित्र क्रमांक 12 में हम करटक की तरह एक काल्पनिक शहर में रहने वाले मानवों की ऊँचाई एवं वजन का रेखाचित्र देखते हैं। चित्र का
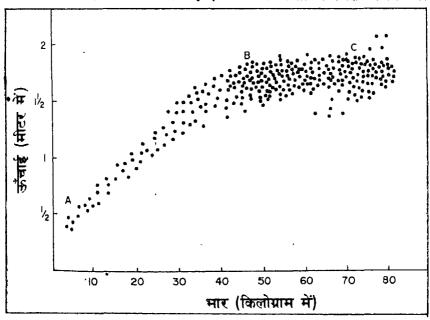
चित्र 12. एक काल्पनिक बस्ती के मानवों के वजन एवं उनकी ऊँचाइयाँ इस रेखाचित्र में अंकित हैं।

प्रत्येक बिंदु एक मानव की ऊँचाई (मीटर में) एवं वजन (किलोग्राम में) दर्शाता है। हम देखते हैं कि बाईं तरफ (AB) ऊँचाई एवं वज़न दोनों बढ़ते जाते हैं। लेकिन दाहिनी ओर ऊँचाई में खास बढ़त नहीं होती। हाँ, वजन में काफी विविधता है, जिस वजह से अधिकांश बिंदु एक ऐसे पट्टे (BC) पर बिखरे हैं जो वजन के अक्ष के समांतर हैं। इस पट्टे पर बिंदुओं की संख्या बाएँ हिस्से के मुकाबले कहीं अधिक है।

इस जानकारी से करटक जैसा बुद्धिमान प्राणी इस निष्कर्ष पर पहुँचा कि मानव के जीवन का अधिकांश भाग ऐसा होता है जब उसकी ऊँचाई स्थिर रहती है . . . और इस तुलना में मानव की आयु का एक छोटा हिस्सा जब उसकी ऊँचाई और वजन दोनों बढ़ते हैं एक बदलती दशा का द्योतक है।

इस बदलती दशा को हम किसी बड़े स्कूल में जाकर भी देख सकते हैं जहाँ पहली से दसवीं कक्षा तक के बच्चे पढ़ते हैं। यद्यपि हम किसी भी बच्चे को थोड़े समय के लिये ही देखते हैं तथापि स्कूल के सभी बच्चों को देखकर हम यह अनुमान कर सकते हैं कि बढ़ती आयु के अनुसार बच्चों की ऊँचाई एवं वजन कैसे बढ़ता जाता है।

ठीक यही विधि हमें तारों की जीवनगाथा समझने में उपयोगी साबित होगी

हर्ट्स्प्रुंग एवं रसेल का रेखाचित्र

डेनमार्क के हर्ट्स्प्रुंग एवं अमेरिका के रसेल नामक दो ज्योतिर्विदों ने क्रमश: 1911 एवं 1913 में स्वतंत्र रूप से एक रेखाचित्र प्रस्तुत किया। हमने चित्र क्रमांक 12 में मानवों का एक रेखाचित्र प्रस्तुत किया था, वैसा ही एक रेखाचित्र इन वैज्ञानिकों ने तारों के समूहों के लिये बनाया। इसका एक उदाहरण हम चित्र क्रमांक 13 में देखते हैं। इन दोनों वैज्ञानिकों के नामों के प्रथम अक्षरों को लेकर इस प्रकार के चित्रों को H-R चित्र कहते हैं।

चित्र क्रमांक 13 में अंकित प्रत्येक बिंदु एक तारे के दो गुण दर्शाता
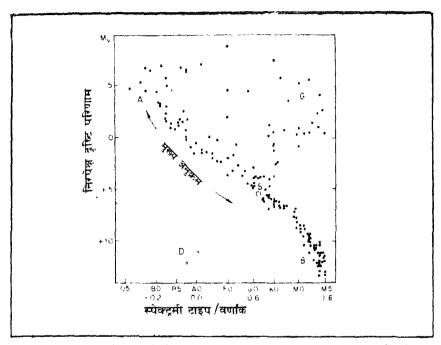
चित्र 13. H–R रेखाचित्र तारों के एक समूह का जिसमें सूर्य (S) भी समाहित है। क्षैतिज अक्ष पर स्पेक्ट्रम के अनुसार तारों का वर्गीकरण किया है जिसमें दाहिनी ओर तापमान कम होता जाता है।

है . . . ऊर्ध्व अक्ष (Y अक्ष) पर उसकी तेजस्वित (अब्सोल्यूट मैग्निट्यूड की श्रेणी पर) एवं क्षैतिज अक्ष (X अक्ष) पर उसका पृष्ठ तापमान। चित्र में जैसे-जैसे हम ऊपर जाते हैं वैसे-वैसे हम वहाँ अधिक प्रकाशवान् तारों का दर्शन करते हैं। तुलना के लिये सूर्य S-अक्षर से दर्शाया गया है। इसके मुकाबले A-अक्षर के पास के तारे 10 मैग्निट्यूड यानी दस हजार गुनी अधिक ऊर्जा का क्षेपण करते हैं (तुम्हें याद होगा कि 5 मैग्निट्यूड का फर्क तेजस्विता को सौ गुना बढ़ाता है . . . अत: सूर्य से 10 मैग्निट्यूड कम वाला तारा उससे 100 × 100 गुना तेजस्वी है)। इसी प्रकार अक्षर

B के पास के तारों के मुकाबले सूर्य सौ गुना से अधिक तेजस्वी है।

तापमान के हिसाब में भी सूर्य का तापमान न तो सबसे अधिक है और न ही सबस कम। जैसे-जैसे हम H–R चित्र में दाहिनी ओर जाते हैं वैसे-वैसे तारों का तापमान कम होता जाता है। पिछले परिच्छेद के अनुसार हम कह सकते हैं कि A अक्षर के पास वाले तारे नीले हैं और B या G के पास वाले तारे लाल हैं।

चित्र क्रमांक 13 से यह भी स्पष्ट है कि समूह के अधिकांश तारे तिरछे पट्टे AB पर बिखरे हैं। इसे मेन सीक्वेंस या मुख्य अनुक्रम कहते हैं। कुछ तारे एक विरल सी शाखा में मुख्य अनुक्रम से दाहिनी और ऊपरी दिशा में बिंदु G की ओर बिखरे हुए हैं। इन तारों का व्यास सूर्य के मुकाबले सौ गुना या अधिक भी होता है। अत: इन्हें दानव तारे (जायंट स्टार) कहते हैं। इनका रंग लाल होने की वजह से अक्सर इन्हें रेड जायंट या लाल दानव भी कहते हैं।

इसके अलावा चित्र में बाईं ओर निचले हिस्से में D अक्षर के पास जो दो तारे हैं वे तेजस्विता में फीके हैं। चूँकि ये सूर्य की अपेक्षा शतांश या और भी छोटे व्यास के होते हैं एवं इनका रंग सफेद होता है अत: इन्हें श्वेत बटु (व्हाइट् ड्वार्फ) कहते हैं।

तारों के व्यास

दानव या बटु . . . दोनों प्रकार के तारों का व्यास हमें कैसे मालूम पड़ता है ? पृथ्वी से देखने पर तो सभी तारे चमकते बिंदुओं की तरह लगते हैं और ज्यामिति हमें बताती है कि बिंदु में न लंबाई होती है, न चौड़ाई या मोटाई। चूँकि तारे हमसे बहुतं दूर हैं इसलिये हम यहाँ बैठे उनके व्यास को नाप नहीं सकते। चित्र क्रमांक- 14 में हम (यानी निरीक्षक O) एक तारे का व्यास AB नापना चाहते हैं। इस के लिये हमें तारे की दूरी और कोण AOB नापना होगा। दूरियों के नापने का तरीका तो हम पहले देख चुके हैं इसलिए अब यह देखते हैं कि कोण AOB कितना सूक्ष्म है।
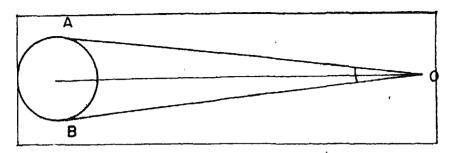
चित्र 14. गोल तारे का प्रक्षिप्त कोण AOB सूर्य के लिये लगभग आधे अंश के बराबर है।

सूर्य द्वारा प्रक्षिप्त यह कोण करीब आधे अंश के बराबर होता है। ऐसा कोण हम आसानी से नाप सकते हैं लेकिन यदि सूर्य प्लक्ष तारे जितना दूर होता तो यह कोण कितना सूक्ष्म होता ?

पाँचवे परिच्छेद में हमने देखा था कि प्लक्ष की दूरी सूरज के मुकाबले 22 लाख गुना अधिक है और ज्यामिति के नियम के अनुसार कोण, AOB. तारे की दूरी के विपरीत अनुपात में हुआ करता है। यानी प्लक्ष तारे जितनी दूरी पर स्थित सूर्य जैसे किसी तारे के लिये यह कोण एक अंश के 44 लाखवें हिस्से जितना छोटा होगा। इतना सूक्ष्म कोण आज के उपकरण नहीं नाप सकते हैं। ऐसी स्थिति में हम उस तारे का आकार मान कैसे निश्चित कर सकते हैं ? और यह कैसे बता सकते हैं कि कौन सा वह तारा दानव है या सूर्य जैसा या फिर श्वेत बटु ?

इस गुत्थी को सुलझाने के लिये हम कृष्णिका के गुणों का सहारा लेते हैं। भौतिकी के स्टेफान एवं बोल्ट्ज़मान नामक दो जर्मन वैज्ञानिकों ने पिछली सदी में एक सरल नियम खोज निकाला। इस नियम के अनुसार यदि किसी कृष्णिका का तापमान केल्विन स्केल पर T हो तो उसके पृष्ठ भाग के इकाई-क्षेत्रफल से σT^4 ऊर्जा प्रति सेकंड निकलती है। 'σ' एक भौतिकी स्थिरांक है जो "स्टेफान-बोल्ट्ज़मान स्थिरांक" के नाम से जाना जाता है।

इस तरह यदि तारे का अर्धव्यास R हो, तो उसका पृष्ठ क्षेत्रफल $4\pi R^2$ होता है। अत: उसमें से प्रति सेकंड निकलने वाली ऊर्जा $L = 4\pi R^2 \times \sigma T^4$ होनी चाहिए। चूँकि हम तारे की तेजस्विता L और उसका पृष्ठ तापमान T जानते हैं इसलिए मालूम कर सकते हैं।

उदाहरण के लिये, प्लक्ष तारे की तेजस्विता एवं पृष्ठीय तापमान $L = 1.4 \times 10^{28}$ वाट, $T = 4500$ केल्विन है और स्टेफान-बोल्ट्ज़मान स्थिरांक का मान है

$\sigma = 6 \times 10^{-8}$ वाट प्रति वर्ग मीटर प्रति सेकंड प्रति $(\text{अंश})^4$
इन मानों को उपर्युक्त समीकरण में प्रयुक्त करके हमें उत्तर मिलता है

$$R = 6.6 \times 10^9 \text{ मीटर}$$

अत: सूर्य के मुकाबले प्लक्ष तारे का व्यास लगभग दस गुना अधिक है। स्पष्ट रूप से प्लक्ष तारा एक दानव तारा है।

अब हम H–R चित्र की एक और बारीकी का अध्ययन करेंगे जो तारों के स्पेक्ट्रम की जानकारी पर आधारित है। यह जानकारी हमें सबसे पहले सूर्य के स्पेक्ट्रम से मिली। अत: यह बेहतर होगा कि पहले हम सूर्य के स्पेक्ट्रम को, जिसमें सात इंद्रधनुषी रंग होते हैं, गौर से देखें

फ्रानहाफर की अवशोषण रेखाएँ

जब हम सूर्य के प्रकाश को एक प्रिज़्म में से गुजारते हैं तब उसका सात रंगों में विभाजन होते देखते हैं। लेकिन यदि हम इस विभाजन का अधिक बारीकी से निरीक्षण करें, जैसा कि सर्वप्रथम सन् 1814 में फ्रानहाफर नामक एक जर्मन वैज्ञानिक ने किया था तब हमें चित्र क्रमांक 15 में प्रदर्शित स्पेक्ट्रम देखने को मिलेगा।

स्पेक्ट्रम में प्रकाश की किरणें अपनी अलग-अलग तरंग दैर्ध्य के अनुसार कम

या अधिक मुड़कर एक पर्दे पर दिखाई देती हैं। स्पेक्ट्रम में लाल रंग से लेकर बैंगनी रंग तक सभी रंग दिखाई देते हैं परंतु चित्र क्रमांक 15 में हमें इन रंगों के अलावा बीच-बीच में काली रेखाएँ भी दिखाई देती हैं। यही रेखाएँ फ्रानहाफर ने सूर्य के स्पेक्ट्रम में देखीं जो अब "फ्रानहाफर रेखाओं" के नाम से जानी जाती हैं। अब प्रश्न यह है कि ये रेखाएँ क्यों आती हैं ?

काला रंग, प्रकाश का अभाव दर्शाता है। उदाहरण स्वरूप चित्र क्रमांक 15 में K एवं H अक्षरों से दर्शित काली रेखाएँ तरंग दैर्ध्य 3,950 ऐंगस्ट्रॉम के आसपास दिखाई देती हैं और काली रेखा C, 6,563 ऐंगस्ट्राम के पास। अत: इन्हीं तरंग दैर्ध्यों पर ही प्रकाश का अभाव क्यों है ?

इस प्रश्न का उत्तर उन्नीसवीं सदी के वैज्ञानिक भी नहीं दे पाये। इतना तो स्पष्ट था कि स्पेक्ट्रम की काली रेखा वहाँ प्रकाश का अभाव दर्शाती है। यानी, सूर्य से आने वाले प्रकाश का बीच में ही अवशोषण हो जाता है। इसीलिये ऐसी काली रेखा को अवशोषण रेखा, (एब्जॉर्प्शन लाइन) कहते हैं। इसका अर्थ है कि कोई ऐसा वायुरूप पदार्थ सूर्य और हमारे बीच मौजूद है जो इस प्रकार का शोषण करता है।

लेकिन तत्कालीन वैज्ञानिक यह नहीं समझ पा रहे थे कि यह शोषण कुछ चुनी हुई तरंग दैर्ध्य वाली लहरों का ही क्यों होता है। साधारणत: प्रकाश का शोषण ऐसी
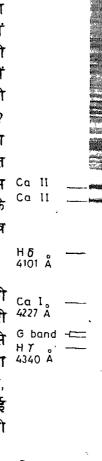
चित्र 15. सूर्य का स्पेक्ट्रम जिसमें काली रेखाएँ प्रकाश का शोषण दर्शाती हैं।

एक दो रेखाओं पर न होकर, तरंग दैर्घ्यों के एक पूरे पट्टे पर होगा यही उनका विश्वास था। यह एक नये प्रकार की शोषण क्रिया थी जिसका रहस्य तब खुला जब बीसवीं सदी के उदयकाल में "क्वांटम सिद्धांत" वैज्ञानिकों के सामने आया।

अणु, परमाणु जैसी अतिसूक्ष्म वस्तुओं के व्यापारों का अध्ययन करते समय यह ज्ञात हुआ कि न्यूटन के गति के नियम इन पर लागू नहीं होते। इन पर केवल क्वांटम गति के नियम ही लागू होते हैं। यहां हम इन नियमों की चर्चा नहीं करेंगे। केवल इनके द्वारा अवशोषण रेखा की मीमांसा करेंगे। उदाहरण के लिये, हम यह देखेंगे कि फ्रानहाफर की C रेखा स्पेक्ट्रम में कैसे आती है।

इस प्रश्न का उत्तर जानने के लिये हम चित्र क्रमांक-16 के परमाणु हाइड्रोजन के रूप पर गौर करेंगे। यह सबसे छोटा परमाणु है, जिसके न्यूक्लियस में एकमात्र कण प्रोटान होता है और इसकी परिक्रमा करता है एक दूसरा कण, जिसे इलेक्ट्रान कहते हैं। प्रोटान का विद्युत आवेश धनात्मक एवं इलेक्ट्रान का ऋणात्मक होने की वजह से दोनों कण एक दूसरे को आकर्षित करते हैं। न्यूटन के गति के नियमों के अनुसार इलेक्ट्रान, प्रोटान की परिक्रमा करता है। लेकिन क्वांटम नियमों के अनुसार परिक्रमा की कक्षाएँ एक निश्चित अनुक्रम में होती हैं। चित्र क्रमांक-16 में हम इस अनुक्रम की पहली तीन कक्षाएँ देखते हैं। पहली कक्षा सबसे अंदर होती है, जिसमें इलेक्ट्रान की ऊर्जा सबसे कम होती है। दूसरी कक्षा में पहली कक्षा से अधिक और तीसरी में दूसरी से भी अधिक ऊर्जा होती है। इस हिसाब से यदि इलेक्ट्रान भीतरी कक्षा से बाहरी कक्षा की ओर जाना चाहे तो उसे ऊर्जा की आवश्यकता होगी।

उदाहरण के लिए, कल्पना करो, तुम रेल से जाना चाहते हो और तुम्हारे पास दूसरे दर्जे का टिकट है जिसके लिये तुमने 25 रुपये मूल्य दिया है। रेलगाड़ी में दूसरे दर्जे के सभी डिब्बे भरे हुए हैं पर पहले दर्जे में कुछ जगह बाकी है। अतः अब तुम पहले दर्जे से रेल का सफर तय करना चाहते हो जिसके टिकट का मूल्य है

100 रुपए। इसलिए अब पहले दर्जे से सफर तय करने के लिये तुम्हें ठीक 100 – 25 = 75 रुपए अधिक देने होंगे। इससे कम नहीं और न ही इससे अधिक।
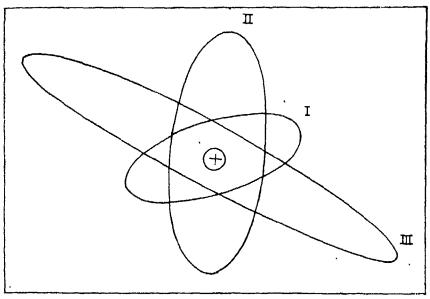
चित्र 16. हाइड्रोजन परमाणु में इलेक्ट्रान की तीन अंदरूनी कक्षाएँ

ठीक यही स्थिति इलेक्ट्रान की भी है, जो भीतरी कक्षा से बाहरी कक्षा में जाना चाहता है। इन दो कक्षाओं की ऊर्जाओं के अंतर के बराबर उसे यदि ऊर्जा मिले तो वह अपनी कक्षा बदल सकता है। उदाहरण स्वरूप, दूसरी से तीसरी कक्षा तक जाने के लिये इलेक्ट्रान को 3×10^{-19} जूल ऊर्जा चाहिये। यह ऊर्जा वह कहाँ से लाये ?

प्रकाश से ! प्रकाश लहरों में ऊर्जा होती है। मैक्स प्लांक नामक मशहूर जर्मन वैज्ञानिक ने क्वांटम सिद्धांत की बुनियाद रखते समय यह प्रतिपादन किया था कि

लहरों के अलावा प्रकाश का एक और रूप है – कणों का। प्रकाश कणों को आगे चलकर "फोटान" नाम अल्बर्ट आइन्स्टाइन ने दिया। प्लांक के प्रतिपादित नियम के अनुसार यदि प्रकाश की तरंग दैर्घ्य L हो तो उसके प्रत्येक कण की ऊर्जा

$$E = (h \times c)/L$$

होती है। यहाँ c = प्रकाश का वेग एवं h = प्लांक का स्थिरांक है। हिसाब लगाने के लिये यदि हम L को ऐंग्स्ट्राम में व्यक्त करें और E को जूल में, तो

$$E \times L = 20 \times 10^{-16}$$

अब हम यह मालूम कर सकते हैं कि इलेक्ट्रान को दूसरी से तीसरी कक्षा में भेजने के लिये किस तरंग दैर्घ्य के फोटान का शोषण आवश्यक है। जैसा कि हमने देखा, ऊर्जा की आवश्यकता है $E = 3 \times 10^{-19}$ जूल। फिर उपर्युक्त समीकरण से हमें उत्तर मिलता है L = 6,666 ऐंग्स्ट्राम। ठीक प्रकार से लगाये हिसाब के अनुसार उत्तर मिलता है L = 6,563 ऐंग्स्ट्राम।

ठीक यही तरंग दैर्घ्य फ्रानहाफर की C – रेखा की भी है। यानी हाइड्रोजन के परमाणु जिनके इलेक्ट्रान दूसरी कक्षा से तीसरी कक्षा में जाते हैं इस तरंग दैर्घ्य के प्रकाश का शोषण करते हैं। इसी प्रकार H और K रेखाओं का उद्गम, कैल्शियम परमाणुओं द्वारा शोषण के कारण होता है। इस तरह स्पेक्ट्रम की अवशोषण रेखाओं से हमें सूरज की नहीं बल्कि अन्य तारों के बाहरी भागों में स्थित परमाणुओं की भी जानकारी मिलती है।

स्पेक्ट्रम के अनुसार तारों का वर्गीकरण

करटक-दमनक के किस्से में करटक ने मानवों की ऊँचाई एवं वजन के अलावा अन्य गुण भी दर्ज किये थे। जैसे बालों एवं आँखों के रंग, त्वचा का रंग एवं उसकी मुलायमता और सिकुड़न आदि। इनसे उसे मानवों के विविध प्रकारों एवं उनमें बचपन से बुढ़ापे तक होने वाले परिवर्तन का अंदाजा लगाने में अधिक सहायता मिली। चित्र में तारों के तापमान एवं तेजस्विता के अलावा उनके स्पेक्ट्रम

के प्रकारों की भी जानकारी दी जाती है।
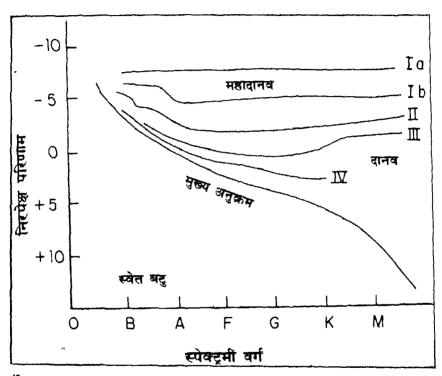
चित्र 17. H–R चित्र में स्पेक्ट्रम के अनुसार तारों का वर्गीकरण। I, II आदि विभाजन रेखाएँ तारों का तेजस्विता के अनुसार वर्गीकरण करती हैं।

चित्र क्रमांक 17 में हम फिर एक H – R चित्र उपस्थित करते हैं जिसमें तापमान के अक्ष पर O,B,A,F,G,K,M,R,N, अक्षर दिखाई देंगे। यह तारों का वर्गीकरण, उनके स्पेस्ट्रम की अवशोषण रेखाओं के अनुसार है। सारणी -4 में हम इस वर्गीकरण को अधिक विस्तार से देख पाते हैं।

सारणी – 4

तारों का स्पेक्ट्रम के अनुसार वर्गीकरण

वर्ग नाम	पाये जाने वाले मूलतत्व	पृष्ठीय तापमान (अब्सोल्यूट स्केल पर)
O	हीलियम, अधिकतर ऐसे जिनके बाहरी इलेक्ट्रान निकल चुके हैं।	30000 से अधिक
B	हीलियम, अधिकतर ऐसे जिनके इलेक्ट्रान परमाणुओं में मौजूद हैं।	11000 – 30000
A	हाइड्रोजन, कैल्शियम (थोड़ा)	7300 – 11000
F	कैल्शियम तथा धातुएँ एवं थोड़ा हाइड्रोजन	6000 – 7300
G	कैल्शियम एवं धातुएँ (विपुल)	5200 – 6000
K	धातुएँ अधिक कैल्शियम (थोड़ा)	3500 – 5200
M	धातुएँ तथा कुछ अणु	3500 से कम

जैसा कि हमने देखा, अवशोषण रेखाएें तारों के बाहरी भाग के रासायनिक बनावट की जानकारी देती हैं। तारों के भीतर से आने वाला प्रकाश उनके पृष्ठ भाग पर मौजूद परमाणुओं के आवरण से गुजरते समय उनके द्वारा चुने हुए तरंग दैर्ध्यों द्वारा शोषित होता है। परमाणु भौतिकी द्वारा हम यह बता सकते हैं कि कौन सी काली रेखा किस अणु के कारण स्पेक्ट्रम में आई है — ठीक उसी प्रकार जैसे पुलिस के विशेषज्ञ, उंगलियों के छापों के द्वारा व्यक्ति की पहचान कर लेते हैं। इसी प्रकार हम यह भी जान सकते हैं कि कुछ तारों पर हीलियम अधिक है तो कुछ पर हाइड्रोजन और कुछ पर कार्बन।

सारणी -4 में पृष्ठीय तापमान भी दिये हैं। भौतिकी के क्वांटम एवं उष्मागतिकी नियमों द्वारा हम यह जानकारी भी हासिल कर सकते हैं। अधिक तप्त तारों पर (0 वर्ग वाले) हीलियम का राज्य है तो न्यूनतम तापमान के तारों पर (N

वर्ग के) कार्बन का। हमारा सूरज इस वर्गीकरण में G-वर्ग में आता है इसलिए तारों के स्पेक्ट्रम को देखकर कुशल निरीक्षक उसका वर्ग एवं पृष्ठीय तापमान आसानी से बता सकते हैं।

इस परिच्छेद को समाप्त करने से पहले हम कुछ ऐसे तारों का भी जिक्र यहाँ करेंगे जिनके स्पेक्ट्रम में काली की बजाय चमकदार रेखाएँ मिलती हैं, जिन्हें उत्सर्जन रेखाएँ कहते हैं। उदाहरण के लिये मायरा सेटी के स्पेक्ट्रम में ऐसी रेखाएँ पाई जाती हैं। उनका उद्‌गम अवशोषण रेखाओं के विपरीत होता है। चित्र क्रमांक-16 में यदि इलेक्ट्रान तीसरी कक्षा से दूसरी कक्षा में प्रवेश करे तो उसकी ऊर्जा में कमी होगी और इसलिये वह अपनी अधिक ऊर्जा को एक फोटान के रूप में बाहर फेंकेगा। इस फोटान की ऊर्जा ठीक उतनी होगी जितनी कमी इलेक्ट्रान की ऊर्जा में हुई थी। इसलिए ये चमकदार रेखाएँ, अधिक ऊर्जा के इलेक्ट्रानों के निचली कक्षा में प्रवेश करने के कारण निकलती हैं। इसके विपरीत काली रेखाएँ इलेक्ट्रान के निचली कक्षा से ऊपर कूदने की द्योतक हैं।

इस प्रकार संक्षेप में, हम इस नतीजे पर पहुँचते हैं कि यदि हम तारे के स्पेक्ट्रम में काली (अवशोषण) रेखाएँ पाते हैं तो उसका अर्थ है कि तारे से निकलने वाला प्रकाश उसके बाहरी पृष्ठ आवरण पर स्थिति परमाणुओं द्वारा उन रेखाओं की तरंग दैर्ध्यों पर शोषित होता है। चूँकि अवशोषण के पूर्व परमाणु का इलेक्ट्रान निचले दर्जे की (यानी कम ऊर्जा की) कक्षा में होता है, यह आवरण तापमान की कमी का द्योतक है। इसी प्रकार चमकदार रेखाओं का अस्तित्व ऊँचे दर्जे की कक्षा में स्थित इलेक्ट्रान के कारण होता है, जो कि आवरण के अधिक तापमान का द्योतक है। अधिकांश तारों के स्पेक्ट्रम अवशोषण स्पेक्ट्रम होते हैं।

तारे के बदलते रूप

H–R चित्र में तारों की विविधता के विषय में जानकारी मिलती है जैसे मानवों के एक समूह में छोटे-बड़े, ऊँचे-नाटे, मोटे-पतले सभी प्रकार के मानव

हमें देखने को मिलते हैं, ठीक वैसे ही तारों के समूह में हम अनेक प्रकार के तारे पाते हैं। अब प्रश्न यह है कि जैसे बढ़ती आयु के अनुसार मानव का बाहरी रूप बदलता है क्या वैसे ही तारों के रूप में भी समय अनुसार परिवर्तन होता है ? बाल्यावस्था में कम ऊँचाई एवं हलके वजन का व्यक्ति,जवानी में ऊँचा एवं भारी हो जाता है। तारों की दशा में भी क्या ऐसे ही परिवर्तन होते हैं जिस वजह से दानव या बटु के रूपों में से उन्हें गुजरना पड़ता है ?

चित्र 13 से एक जानकारी हमें यह मिलती है कि तारा-समूह के अधिकांश तारे मुख्य अनुक्रम में हैं। चित्र क्र. 12 वाले मानवीय उदाहरण से हमें यह पता चलता है कि मानव का अधिकांश जीवन BC पट्टे पर बीतता है। इसी तरह हम कह सकते हैं कि तारा अपने जीवन का अधिकांश भाग मुख्य अनुक्रम में बिताता है। यह कालावधि कितनी लंबी होती है ?

जैसा कि हमने देखा सूरज भी मुख्य अनुक्रम का तारा है। भूगर्भ शास्त्र एवं जीवशास्त्र (जो हमें पृथ्वी की जानकारी देते हैं) हमारे सामने ऐसे सबूत पेश करते हैं जिनसे हम इस नतीजे पर पहुँचते हैं कि सूर्य की तेजस्विता में पिछले तीन चार अरब वर्षों में कोई खास परिवर्तन नहीं हुआ है। यानी इतने लंबे अरसे से वह मुख्य अनुक्रम में ही टिका है। अगले परिच्छेद में हम देखेंगे कि करीब पाँच अरब वर्ष और सूर्य इसी भाँति रहेगा।

इससे स्पष्ट है कि दमनक के तरीके से हम तारों की जीवनगाथा नहीं लिख सकते। हमारे सबसे निकट के तारे सूर्य का पूरा जीवन आदि से अंत तक देखने के लिए अरबों साल की अवधि हमें चाहिये, जो हमें उपलब्ध नहीं है। अत: हम करटक का मार्ग अपनाएँगे। एक ही तारे को जन्म से मृत्यु तक देखने के बजाय हम विविध अवस्थाओं में पाये जाने वाले तारों को देखेंगे।

चूँकि सूर्य हमारे सर्वाधिक निकट है इसलिये बेहतर यह होगा कि पहले हम उसी की अवस्था को ठीक से समझने का प्रयास करें।

5

सूर्य का तेज का रहस्य

सूरज इतना प्रकाशवान् क्यों है ? दिन में अगर हम उसकी ओर देखने का दुस्साहस करें तो हमारी आँखें चकाचौंध हो जाती हैं। सूर्योदय के होते-होते आकाश के सभी तारे लुप्त हो जाते हैं और शुक्र जैसा हमारा निकटतम पड़ोसी ग्रह भी, अधिक समय तक दर्शन नहीं दे सकता। सूरज की इसी तेजस्विता के कारण प्राचीन काल से मानव यह विश्वास करता आया है कि सूर्य में कोई दिव्य शक्ति मौजूद है। मिस्र की सभ्यता में, सूर्य को भगवान "रा" से संबोधित किया जाता था, यूनानी देवताओं के परिवार में सूर्य "अपोलो" नाम से जाना जाता था तो हमारे वेदकालीन गायत्री मंत्र के "सविता" भी सूर्य भगवान् ही थे।

विज्ञान के बढ़ते प्रभाव के साथ मानव ने यह अनुभव किया कि आकाश की ये चमकने वाली वस्तुएँ भी भौतिकी के नियमों का पालन करती हैं। न्यूटन ने अपने प्रसिद्ध ग्रंथ "प्रिन्सिपिया" में ग्रहों द्वारा सूर्य की परिक्रमा का संपूर्ण विवेचन अपने गति के नियमों एवं गुरुत्वाकर्षण के नियम के माध्यम से किया। इन्हीं नियमों का आधार लेकर न्यूटन के मित्र एडमंड हैले ने धूमकेतुओं की कक्षाएँ निश्चित कीं।

फिर जैसे-जैसे विद्युत चुंबकीय सिद्वांत एवं प्रकाश की जानकारी प्रयोगशाला के अनेक प्रयोगों द्वारा मिलती गई, हमें यह प्रतीत हुआ कि सूर्य प्रकाश में ऐसा कोई अनोखापन नहीं है जिससे उसे "दिव्य" कहा जा सके। प्रकाश का सात रंगों में विभाजन जैसे हम प्रयोगशाला में प्रकाश स्रोत तैयार कर उसे प्रिज़्म से गुज़ार कर देख सकते हैं, वैसे ही सूर्य प्रकाश का 'इंद्रधनुष' में होता देखते हैं। सूर्य प्रकाश बिखरकर आकाश को नीला क्यों करता है यह भी अब हम जानते हैं।

जिस विज्ञान के द्वारा हम सूर्य के इन गुणों को अच्छी तरह समझ सके हैं क्या वही विज्ञान हमें सूर्य के तेज की पहेली बुझाने में सहायता कर सकेगा ...?

इस प्रश्न का उत्तर आज हम 'हाँ, अवश्य' इन शब्दों में दे पाते हैं। इतना ही नहीं, इस उत्तर के माध्यम से 'ज्योति:शास्त्र' ने विज्ञान को एक मूलभूत जानकारी प्रदान की है उसकी भी हमें एक झलक यहाँ मिलेगी। लेकिन इस दिशा में मुड़ने से पहले, हम संक्षेप में एक विषय की चर्चा करेंगे जिस पर शायद तुमने भी कुछ सोचा होगा।

पृथ्वी की प्रयोगशालाओं में काम करने वाले वैज्ञानिक, ज्योतिर्विदों से अक्सर ऐसा सवाल करते हैं: "आकाश में इतनी दूर स्थित वस्तुओं का अध्ययन करने से हम पृथ्वी वासियों को क्या लाभ पहुंच सकता है ?" इस प्रश्न के पीछे एक उद्देश्य ज्योतिर्विदों को चिढ़ाने का होता है, कि उनके अध्ययन शोध आदि मानव समाज के लिये निरुपयोगी होते हैं।

ज्योति:शास्त्र के प्रति इससे अधिक अन्याय क्या हो सकता है ? जैसा कि इतिहास बताता है, गुरुत्वाकर्षण के महत्वपूर्ण एवं मूलभूत नियम की जानकारी न्यूटन को ग्रहों एवं चंद्रमा की गतियों के निरीक्षणों से मिली (सेब के सिर पर गिरने से नहीं, जैसा एक कल्पित कहानी में बताया जाता है)। इसी गुरुत्वाकर्षण के सिद्वांत की जानकारी के कारण मानव अंतरिक्ष में स्पुटनिक भेज सका, चंद्रमा की यात्रा कर आया एवं आज सूचना एवं प्रसारण के लिये कामयाब उपग्रह अंतरिक्ष में छोड़ रहा है।

फिर इसी ज्योतिःशास्त्र के एक निरीक्षण द्वारा एक ऐसी नई बात सामने आई जो भौतिकी के एक मूलभूत भाग न्यूक्लीय भौतिकी के लिये प्रेरणादायक सिद्ध हुई। इस खोज ने केवल सूर्य की तेजस्विता का ही रहस्य नहीं खोला बल्कि तारों के जीवनक्रम का रास्ता भी दिखाया।

केल्विन-हेल्महोल्ट्ज़ का सिद्धांत

न्यूक्लीय भौतिकी की खोज से पहले, पिछली शताब्दी के दिग्गज स्वरूप दो वैज्ञानिकों ने सूर्य की ऊर्जा का नाता उसकी गुरुत्वाकर्षण शक्ति से जोड़ा था। ये वैज्ञानिक थे ब्रिटेन के लार्ड केल्विन एवं जर्मनी के बैरन फान हेल्महोल्ट्ज़। उनके सिद्धांत को जानने के लिये हम पहले यह देखेंगे कि गुरुत्वाकर्षण के बल और ऊर्जा में क्या संबंध है।

गेंद से खेलते समय जब तुम काफी शक्ति से गेंद ऊपर उछालते हो तो काफी ऊपर जाकर वह फिर वापिस आती है और तेजी से पृथ्वी से टकराती है। गेंद वापिस क्यों आती है ? क्योंकि पृथ्वी का गुरुत्वाकर्षण उसे अपनी ओर आकर्षित करता है। गेंद जितनी ऊपर से गिरेगी उतनी ही तेजी से टकराएगी।

अब कल्पना करो कि गेंद ऊपर से नीचे पृथ्वी की ओर आ रही है। नीचे गिरती हालत में हम गेंद को तीन सतहों पर देखेंगे उनमें सतह A है सबसे ऊँची, जहाँ से गेंद का नीचे गिरना शुरू हुआ,B है सबसे निचली सतह जहाँ गेंद पृथ्वी से टकराई। सतह C इन दोनों के बीच की है। A पर गेंद का वेग शून्य था क्योंकि वहाँ गेंद का गिरना शुरू हुआ और B पर वह सर्वाधिक था। यदि हम गेंद की ऊर्जा नापना चाहें तो वह हमें दो रूपों में मिलती है।

एक है गति के कारण उत्पन्न, गतिज ऊर्जा जो A पर शून्य है और B पर सर्वाधिक, तथा C पर दोनों के दरमियान। लेकिन वास्तव में गेंद की ऊर्जा का बजट यह बताता है कि उसकी पूरी ऊर्जा हर वक्त उतनी ही बनी रहती है, न घटती है न बढ़ती है। इसका कारण यह है कि गति के अलावा गेंद के पास ऊर्जा

का दूसरा साधन भी है, वह है—गुरुत्वाकर्षण की ऊर्जा का, जो सतह A पर सर्वाधिक है और B पर न्यूनतम। इसलिए गिरती हुई गेंद की ऊर्जा, गुरुत्वाकर्षण की ऊर्जा से बदल कर क्रमश : गतिज ऊर्जा में परिवर्तित होती है। C पर हम ऊर्जा के दोनों रूप पाते हैं।

यह गुरुत्वाकर्षण की ऊर्जा गेंद में क्योंकर आई ? तुमने गेंद ऊपर फेंकते समय जो शक्ति लगाई थी उसमें तुम्हारी ऊजा का व्यय हुआ था। यह शक्ति तुम्हें क्यों लगानी पड़ी ? इसलिये कि पृथ्वी के गुरुत्वाकर्षण के बावजूद गेंद ऊपर तक जा सके। तो गुरुत्वाकर्षण के खिंचाव के प्रतिकूल जाते वक्त ऊर्जा का व्यय करना पड़ता है। वही ऊर्जा खिंचाव की दिशा में जाते वक्त वापस मिलती है।

अब हम यह देखेंगे कि गिरने पर गेंद क्या करती है। पृथ्वी पर दो-चार बार उछलने के बाद गेंद स्थिर हो जाती है। अब उसके पास न तो गुरुत्वाकर्षण की ऊर्जा है और न गतिज ऊर्जा फिर सारी ऊर्जा कहाँ गई ?

पृथ्वी की सतह से टकराने एवं उस पर उछलते समय घर्षण के कारण वह ऊर्जा गर्मी में रूपांतरित होती है। यदि टकराते समय गेंद आवाज करे तो ऊर्जा का कुछ भाग ध्वनि के रूप में भी आता है। यानी सतह A से गिरकर वह गेंद जब पृथ्वी पर पूरी तरह स्थिर हो जाती है तब उसकी गुरुत्वाकर्षण की ऊर्जा का पूरा रूपांतर गर्मी या आवाज की ऊर्जा में होता है।

ठीक यही कल्पना केल्विन-हेल्महोल्ट्ज़ के सिद्धांत के पीछे थी।

इस कल्पना के अनुसार सूर्य एक वायु का गोला है जो अपने गुरुत्वाकर्षण के कारण धीरे धीरे सिकुड़ रहा है। सिकुड़ने की क्रिया में इस गोले के विभिन्न कण एक दूसरे के निकट आते हैं। जैसे ऊपर दिये उदाहरण में गेंद और पृथ्वी के परस्पर निकट आने से गुरुत्वाकर्षण की ऊर्जा, रूपांतरित होकर अन्य किसी माध्यम से (ध्वनि एवं ताप में) व्यक्त होती है वैसे ही वायु गोले के सिकुड़ने से मिलने वाली ऊर्जा विकिरण के रूप में बाहर निकलती है। केल्विन एवं

हेल्म्होल्ट्ज़ का अनुमान था कि सूर्य से आने वाले विकिरण की ऊर्जा इसी सिकुड़न के कारण है।

पिछली सदी में यह तर्क भले ही उचित प्रतीत हुआ हो, लेकिन आज हम यह जानते हैं कि सूर्य से निकलने वाली ऊर्जा की कुंजी इसमें नहीं है। कारण स्पष्ट है। सूर्य एवं उसकी ग्रहमाला की उत्पत्ति लगभग साढ़े चार से पाँच अरब वर्ष पहले हुई, ऐसा भूभौतिकीविद बताते हैं। लेकिन पृथ्वी की चट्टानों पर मिले रेडियो एक्टिव मूलतत्वों और पृथ्वी पर आकर टकराने वाले अशनियों में पाये जाने वाले मूलतत्वों के अध्ययन से पृथ्वी एवं ग्रहमाला की आयु 4.6 अरब वर्ष के आसपास बताई जाती है। इस हिसाब से इतनी अवधि तक चमकते रहने के लिये सूर्य को लगभग "55 करोड़ करोड़ करोड़ करोड़ करोड़ करोड" ऊर्जा खर्च करनी पड़ी होगी लेकिन केल्विन हेलमहोल्ट्ज के बताये रास्ते में इसका आधा प्रतिशत भाग भी उपलब्ध नहीं होता।

इसका मतलब यह है कि सूर्य के तेज का स्रोत कहीं अन्यत्र छिपा है।

एडिंग्टन का सिद्धांत

केंब्रिज विश्वविद्यालय के ज्योतिर्विद सर आर्थर एडिंग्टन ने इस शताब्दी के तीसरे दशक में एक नया तर्क प्रस्तुत किया जिसने तत्कालीन भौतिकी के विशेषज्ञों में खलबली मचा दी।

एडिंग्टन ने तारों की रचना का एक सर्वांगीण चित्र गणित एवं भौतिकी के नियमों द्वारा बनाया जो चित्र क्रमांक-18 में प्रस्तुत है। एडिंग्टन की कल्पनानुसार तारा एक तप्त वायु का गोला होता है जो अपना संतुलन अपने गुरुत्वाकर्षण एवं अंदरूनी दबावों के द्वारा बनाए रखता है। जैसा हमने अभी देखा, गुरुत्वाकर्षण के कारण कोई भी वस्तु सिकुड़ने लगती है इसलिए यदि सूरज की सिकुड़न को रोकने वाली कोई दूसरी शक्ति मौजूद न होती तो वह भी तेजी से सिकुड़ता हुआ कुल

उन्तीस मिनटों में बिंदुवत हो जाता।

लेकिन जैसा हम चित्र क्रमांक-18 देखते हैं, सूरज (या किसी भी तारे) का अंदरूनी दबाव इस सिकुड़न को रोक सकता है। इसका कारण यह है कि तारे का तापमान, जो पृष्ठ भाग पर कई हजार अंश होता है, बढ़ते-बढ़ते केंद्र भाग में करोड़
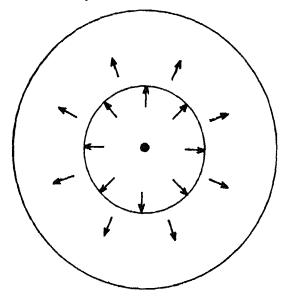
चित्र 18. यहां बाणांकित दिशाओं में सूर्य के अंदरूनी दबाव दिखाये गये हैं जो सूर्य की बाहरी सतहों को अंदर की ओर गिरने से रोकते हैं।

अंश के ऊपर पहुंच जाता है। बढ़ते तापमान के कारण केन्द्र के पास वायु के दबाव भी बढ़ते जाते हैं। यही दबाव गुरुत्वाकर्षण का मुकाबला करने में कामयाब हो जाते हैं।

एक उदाहरण द्वारा हम तारे की इस अंदरूनी स्थिति को अच्छी तरह समझ सकते हैं। कल्पना करो कि एक तैराक समुद्र में गहराई में समुद्री सतह के नीचे पाये जाने वाले बहुमूल्य वनस्पति या मोतियों की खोज में जाता है। जैसे-जैसे वह अधिक गहराई में जाता है, उसे अधिकाधिक दबाव महसूस होता है। लगभग दस मीटर की

गहराई पर दबाव, सतह पर हवा के दबाव का दुगुना हो जाता है, तथा हर दस मीटर की गहराई पर उसमें इतनी ही वृद्धि होती जाती है। .....ऐसा क्यों होता है ?

इसका कारण यह है कि समुद्री सतह से दस मीटर की गहराई पर तैराक को ऊपरी पानी का बोझा शरीर पर लेना पड़ता है जो इस अतिरिक्त दबाव के लिये जिम्मेदार है। बीस मीटर गहराई पर यह अतिरिक्त दबाव दुगुना हो जाता है। ठीक यही कारण है कि तारे की सतह के अंदर प्रवेश करते समय बाहरी वायु के बोझ से अंदरूनी दबाव बढ़ता जाता है और इस भार का कारण वही है जो पृथ्वी की वस्तुओं को भार प्रदान करता है यानी गुरुत्वाकर्षण।

एडिंग्टन ने अपने समीकरणों द्वारा यह निश्चित किया कि तारों के केंन्द्र के पास तीव्र दबाव और करोड़ अंश से अधिक तापमान मौजूद है। इस आधार पर उसने इस तर्क की पुष्टि की कि न्यूक्लीय संलयन (फ्यूजन) के लिये यहाँ अनुकूल स्थिति है। साथ-ही-साथ उसने यह दावा भी किया कि इस संलयन की क्रिया से ही सूरज जैसा तारा अपने लिये ऊर्जा का निर्माण करता है।

यदि तुम एक गर्म वस्तु को ठंडी वस्तु से लोहे की तार से जोड़ो तो क्या होगा ? गर्म वस्तु की गर्मी, ऊर्जा के रूप में ठंडी वस्तु की ओर बहेगी और गर्म वस्तु का तापमान गिरेगा, ठंडी वस्तु का बढ़ेगा।

अब कल्पना करो कि तुम एक तप्त तारे को ठंडे तारे से जोड़ रहे हो। गर्मी की ऊर्जा गर्म से ठंडे तारे की ओर बहेगी पर ऊर्जा के निकलने से गर्म तारे के आंतरिक दबाव कम होंगे और उनका गुरुत्वाकर्षण के बल से बना संतुलन बिगड़ेगा। गुरुत्वाकर्षण के हावी हो जाने से तारा सिकुड़ेगा। इस सिकुड़ने से उसके भीतर की गैसें अधिक गर्म होंगी और तारे का तापमान बढ़ेगा। दूसरी ओर ठंडे तारे में ऊर्जा आने से उसके भीतरी दबाव बढ़ेंगे और वह फूलेगा फूलने से उसके तापमान में गिरावट आयेगी।

तो इस प्रकार गर्म तारा अधिक गर्म होगा और ठंडा तारा अधिक ठंडा।

एडिंग्टन की कल्पना इस प्रकार थी। हाइड्रोजन सबसे छोटा परमाणु है जिसके न्यूक्लियस में एकमात्र कण प्रोटान है। उससे बड़ा परमाणु जो प्रकृति में पाया जाता है, हीलियम कहलाता है। इसके न्यूक्लियस में चार कण, दो प्रोटान तथा दो न्यूट्रान मौजूद रहते हैं। यदि हम हाइड्रोजन के चार न्यूक्लियस एक स्थान पर लाएँ तो उनका द्रव्यमान हीलियम के न्यूक्लियस के द्रव्यमान से कुछ अधिक होता है। अतः यदि चार हाइड्रोजन न्यूक्लियस के संलयन से हीलियम का एक न्यूक्लियस बनाने में हम सफल होते हैं तो इस क्रिया में हम कुछ द्रव्यमान खो बैठेंगे।

लेकिन आइन्स्टाइन के समीकरण

$$E = Mc^2$$

के अनुसार द्रव्यमान M, ऊर्जा Mc^2 के तुल्य होता है जहाँ c प्रकाश का वेग है। इसका मतलब यह है कि यदि किसी क्रिया में हम कुछ द्रव्यमान खो देते है तो बदले में हमें उसके तुल्य ऊर्जा मिलेगी। सारांश में, किसी भी स्थिति में ऊर्जा एवं द्रव्यमान का योग वही बना रहेगा। अत: उपर्युक्त संलयन क्रिया में हम ऊर्जा का निर्माण कर सकेंगे।

आज न्यूक्लीय भौतिकी में संलयन क्रिया से ऊर्जा निर्माण के प्रयत्न में वैज्ञानिक लगे हैं। फयूजन रिएक्टर द्वारा हम पृथ्वी पर संयमित अवस्था में अगर ऊर्जा तैयार कर सकें तो यह हमारी सभ्यता के लिये एक वरदान साबित होगा। क्योंकि इससे हमारी ऊर्जा समस्या पूरी तरह हल हो सकेगी लेकिन अभी तक इस दिशा में हम कामयाब नहीं हो पाए हैं। हाँ, दुर्भाग्यवश, असंयमित (विस्फोटक) रूप में से इस क्रिया द्वारा ऊर्जा निर्माण संभव हो सका है जिसे हम हाइड्रोजन बम के नाम से पहचानते हैं।

लेकिन 1920 में एडिंग्टन की इस कल्पना को तत्कालीन भौतिकविदों ने ठुकरा दिया। उनका कहना था कि संलयन के लिये चार प्रोटान एक जगह लाना

दूसरे को दूर ढकेलते हैं। इस विवाद में एडिंग्टन की दलील यह थी कि करोड़ों अंश के तापमान में ये कण अति तीव्र गति से इधर-उधर घूमते हैं। अत: तारे के केंद्र भाग में तीव्र दबाव एवं घनत्व की दशा में ऐसे कण एक दूसरे से टकराए बिना नहीं रहेंगे, भले ही उनमें विद्युतीय प्रतिकर्षण क्यों न हो। बड़े आत्मविश्वास के साथ एडिंग्टन ने अपनी एक पुस्तक में लिखा:

"हम ऐसे आलोचकों से विवाद नहीं करना चाहते जो कहते हैं कि तारे (इस संलयन क्रिया के लिये) पर्याप्त तप्त नहीं हैं। हम उनसे कहेंगे...जाइये आप इनसे भी अधिक तप्त स्थान पर....."।

1920 – 1940 के दरमियान क्वांटम सिद्धांत एवं न्यूक्लीय भौतिकी का तेजी से विकास हुआ। न्यूक्लियस के कणों, न्यूट्रान एवं प्रोटान में तीव्र आकर्षण बल की जानकारी के साथ वैज्ञानिक इस नतीजे पर पहुंचे कि यदि ऐसे कण एक दूसरे के पास आयें तो उनका न्यूक्लीय आकर्षण वैद्युतीय प्रतिकर्षण से कहीं अधिक शक्तिशाली होता है। अत: ऐसे कणों के टकराव से संलयन संभव है, हाँ टकराव के लिये कणों का एक दूसरे की ओर तेजी से आना आवश्यक है।

ठीक ऐसी ही स्थिति तारे के केंद्र में मौजूद होती है जिसका जिक्र एडिंग्टन करते थे। 1939 में हान्स बेथा नामक न्यूक्लीय वैज्ञानिक ने एडिंग्टन की कल्पना को साकार किया। सूर्य जैसे तारे के केंद्र भाग में न्यूक्लीय संलयन की क्रिया कैसे होती है इसके पूर्ण विवेचन द्वारा उन्होंने यह सिद्ध किया कि इसी मार्ग से सूर्य को अरबों साल चमकते रहने के लिये पर्याप्त ऊर्जा मिलती है।

इस तरह एक ज्योतिर्विद ने भौतिकी को नया मोड़ दिया। जैसा कि हम पहले देख चुके हैं न्यूक्लीय संलयन का संयमित रूप हमें आज तक केवल तारों में ही देखने को मिला है। पृथ्वी पर अपनी प्रयोगशाला में ऐसी क्रिया करवाने में मानव को अभी तक सफलता नहीं मिली है।

□□

6

जब तारा दानव बनता है

सूर्य मुख्य अनुक्रम का एक तारा है जो ऊर्जा का निर्माण केन्द्रीय न्यूक्लीय भट्टी में संलयन क्रिया द्वारा करता है। एडिंग्टन के समीकरणों को हल करने पर हम यह बता सकते हैं कि अमुक द्रव्यमान के तारे से इस क्रिया द्वारा किस वेग से ऊर्जा बाहर निकलेगी। यानी हम तारे की तेजस्विता का सम्बन्ध उसके द्रव्यमान से जोड सकते हैं। साधारणत: हम इस नतीजे पर पहुंचते हैं कि अधिक द्रव्यमान का तारा अधिक तेजस्वी होता है। हमारा गणित हमें यह भी बताता है कि तारे का पृष्ठीय तापमान कितना होना चाहिए।

इसका मतलब यह हुआ कि यदि हमें तारे का द्रव्यमान मालूम हो तो हम उसकी तेजस्विता एवं पृष्ठीय तापमान दोनों गणित द्वारा मालूम कर सकते हैं, और इस प्रकार उसका H – R चित्र पर स्थान निश्चित कर सकते हैं। खगोल भौतिकी के इस गणित की सफलता इसी से स्पष्ट होती है कि मुख्य अनुक्रम के सभी तारों को हम इस प्रकार चित्रित कर सकते हैं। चित्र क्र. 13 के पट्टे के निचले छोर B के पास के तारे न्यूनतम द्रव्यमान के एवं ऊपरी छोर A के निकट के तारे

अधिकतम द्रव्यमान के होते हैं। तारा समूह में पाये जाने वाले तारों के द्रव्यमान हम उसके H – R चित्र में निश्चित कर सकते हैं। साधारणत: सूर्य के मुकाबले एक दशांश से लेकर उसके पच्चीस-तीस गुने अधिक तक तारों के द्रव्यमान पाये जाते हैं।

तारा समूह की दूरी

H – R चित्र, हमें तारा समूह की दूरी नापने का एक मार्ग सूचित करता है। कल्पना करो कि एक तारा समूह इतना दूर है कि हम उसके तारों की दूरियाँ ज्यामिती विधि से तो नहीं नाप सकते हैं लेकिन उन तारों का पृष्ठीय तापमान उनके स्पेक्ट्रम की बदौलत नाप सकते हैं और उनकी तेजस्विता, अपरेंट मैग्निट्यूड के स्केल पर। यानी पृष्ठ 19 के समीकरण

$$\ell = L / 4 \pi R^2$$

में हम ℓ को नाप सकते हैं, L और R को नहीं।

यदि तारा समूह के अधिकांश तारे मुख्य अनुक्रम वाले हों तो हम किसी भी तारे के पृष्ठीय तापमान से उसकी तेजस्विता जान सकते हैं — क्योंकि हमने अभी-अभी देखा कि पृष्ठीय तापमान एवं तेजस्विता, दोनों गुणों का संबन्ध तारे के द्रव्यमान से जोड़ा जा सकता है। अत: हमें L की जानकारी हो जाती है जिसके फलस्वरूप हम R यानी तारे की दूरी मालूम कर लेते हैं।

जब तुम किसी पेड़ को सौ, दो सौ मीटर से देखते हो, तो उसकी दूरी निश्चित करते समय उसकी अलग-अलग पत्तियों की दूरियों का ख्याल नहीं रखते। "पेड़ की दूरी डेढ़ सौ मीटर है" इस उक्ति से यह जाहिर है कि यह दूरी औसत रूप की है। पेड़ वास्तव में बिंदुवत् नहीं हैं, उसकी कुछ पत्तियाँ और डालें औसत से कुछ निकट तथा कुछ औसत से कुछ अधिक दूर होंगी। हो सकता है कि किसी एक पत्ती की दूरी एक सौ अड़तालीस मीटर दस सेन्टीमीटर हो तो किसी अन्य की एक सौ पचास मीटर पंचानवे सेन्टीमीटर।

इसी प्रकार H – R चित्र द्वारा तारा समूह की दूरी औसत रूप से निश्चित की

जाती है। तीन सौ प्रकाश वर्ष की दूरी पर स्थित तारा समूह में कुछ तारे तुलनात्मक रूप से थोडे निकटतर तथा थोड़े दूर होंगे। चूँकि मुख्य अनुक्रम वाले तारे अपनी संख्या के कारण अधिक आसानी से पहचाने जा सकते हैं, हम ऊपरी उपाय से तारा समूह की दूरी नाप पाते हैं।

सूर्य का आकार कब तक ऐसा ही बना रहेगा ?

हाइड्रोजन से हीलियम बनने की क्रिया जब तक तारे के केंद्र भाग में चालू रहेगी तब तक उसके आकार, तेजस्विता, पृष्ठीय तापमान आदि गुणों में कोई लक्षणीय परिवर्तन नहीं दिखाई देंगे। H – R चित्र में मुख्य अनुक्रम पर उसका अपना स्थान बना रहेगा। यह अवधि कितनी लंबी हुआ करती है ?

इस प्रश्न का उत्तर तारे के द्रव्यमान पर निर्भर करता है। साधारण तौर पर हम ऐसा कह सकते हैं कि जितना अधिक द्रव्यमान वाला तारा होगा उतना वह अधिक तेजी से हीलियम बनाएगा और परिणामत: अधिक शीघ्रता से अपनी परमाणु भट्टी के इंधन को अर्थात् हाइड्रोजन को समाप्त कर बैठेगा। यानी अधिक द्रव्यमान के तारे मुख्य अनुक्रम में कम समय तक टिकेंगे और कम द्रव्यमान वाले तारे अधिक समय तक।

चित्र क्रमांक-19 में हम सूरज का केंद्र भाग देखते हैं जहाँ अभी हाइड्रोजन संलयन की क्रिया चल रही है। केंद्र C पर तापमान सर्वाधिक (लगभग 1.3 करोड़ अंश) होता है जो घटते-घटते पृष्ठभाग पर 5,800 केल्विन तक पहुँचता है। न्यूक्लीय संलयन के लिए जितना उच्च तापमान, दबाव एवं घनत्व आवश्यक है वह केवल C के आस पास ही मौजूद है। अत: चित्र में दिखाये गये छोटे गोले के भीतर ही सूरज की परमाणु भट्टी चल सकती है। इस भाग में सूरज का कोई 12 प्रतिशत द्रव्यमान समाहित है।

अब हम हिसाब लगाते हैं कि कितनी ऊर्जा इस भट्टी से निकलेगी और उसके बल पर कुल कितनी लंबी अवधि तक सूरज आज की तरह चमकता रहेगा।

यदि हम इस भट्टी में 1 किलोग्राम हाइड्रोजन को हीलियम में रूपांतरित करें तो हमें कितनी ऊर्जा मिलेगी ? न्यूक्लीय भौतिकी के नियम हमें यह बताते हैं कि इस रूपांतर में कुल 7 ग्राम द्रव्यमान का ह्रास होगा। फिर $E = Mc^2$ समीकरण के अनुसार हमें इस नष्ट हुये द्रव्यमान के बदले लगभग 7 करोड़ करोड़ (7×10^{14}) जूल ऊर्जा मिलेगी। यह ऊर्जा एक मेगावाट के बिजलीघर को निरंतर तेईस वर्ष तक चला सकेगी।
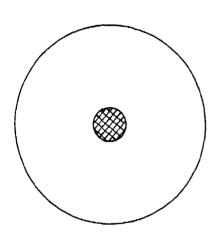
चित्र 19. सूर्य के (रेखांकित) केन्द्र भाग में ही अणुभट्टी चल सकती है।

लेकिन यहां हमारा पृथ्वी के बिजलीघरों से कोई ताल्लुक नहीं है। हमें देखना है सूर्य कितने वर्ष चमकता रहेगा। सूर्य का द्रव्यमान 200 करोड़, करोड़, करोड़ करोड़ (2×10^{30}) किलोग्राम है। उसका 12 प्रतिशत यानी 2.4×10^{29} किलो हमें इंधन के रूप में उपलब्ध है। चूँकि एक किलो इंधन से हमें 7×10^{14} जूल ऊर्जा मिलती है, इसलिये उपर्युक्त इंधन से हमें $2.4 \times 10^{29} \times 7 \times 10^{14}$ जूल $= 1.68 \times 10^{44}$ जूल ऊर्जा मिलेगी।

आज सूर्य प्रति सेकंड 4×10^{26} जूल ऊर्जा खर्चता है। इस हिसाब से उसे अपने लिये उपलब्ध ऊजा कुल 1.68×10^{44} सेकंड / 4×10^{26} अर्थात् लगभग 14 अरब वर्ष चमकता रखेगी। इसमें से 5 अरब वर्ष बीत चुके हैं और 9 अरब वर्ष बाकी हैं। यदि यह हिसाब अधिक बारीकी से लगाया जाय तो यह बची कालावधि 9 अरब वर्षों से कुछ कम (5 से 8 अरब वर्षों के दरमियान) होगी।

सूर्य मुख्य अनुक्रम में रहने की अवधि का लगभग आधा हिस्सा बिता चुका है।

इसके मुकाबले अधिकतम द्रव्यमान वाले तारों की मुख्य अनुक्रम में रहने की अवधि अरबों के बजाय लाखों या करोड़ों वर्षों में गिनी जायगी जबकि न्यूनतम द्रव्यमान के तारे सूर्य से कई गुना अधिक समय मुख्य अनुक्रम पर बिताएँगे।

तो अब हम इस प्रश्न का उत्तर खोजेंगे कि इस अवधि के समाप्त होने पर तारों पर क्या गुज़रता है।

भीतर से पतला बाहर से मोटा ?

कल्पना करो की उपर्युक्त अवधि समाप्त हो चुकी है और सूर्य का परमाणु इंधन–हाइड्रोजन समाप्त हो गया है। ऐसी अवस्था में उसके गर्भ भाग को, जहाँ न्यूक्लीय क्रिया चल रही थी, एक नई कठिनाई का सामना करना पड़ेगा। कठिनाई यह कि वह अपना आंतरिक संतुलन कैसे बनाए रखे।

स्मरण रहे तारे में आंतरिक संतुलन दो विरोधी बलों के बीच बना रहता है: गुरुत्वाकर्षण जो तारे को सिकोड़ना चाहता है और अंदरूनी दबाव जो उसे फुलाना चाहते हैं। अंदरूनी दबाव, तारे के वायु एवं विकिरण के कारण हैं जो अति तप्त अवस्था में है और तप्त अवस्था बनाए रखने का काम करती है – परमाणु भट्टी, जिसमें से ऊर्जा हर वक्त निकलती रहती है। यदि यह भट्टी इंधन के अभाव में बंद हो जाय तो गर्भ भाग में दबाव बनाये रखना तारे के बस की बात नहीं रहती।

इस हालत में अगर गर्भ भाग सिकुड़ने लगे तो आश्चर्य की बात नहीं। गुरुत्वाकर्षणका बल उसे अधिकाधिक तेजी से दबोचने पर हावी रहता है लेकिन तारे के सौभाग्य से इस बिगड़ते संतुलन को फिर से काबू में लाने में उसे सफलता मिलती है।

वायु एवं विकिरण दोनों का यह गुण है कि यदि हम उन्हें चारों ओर से दबायें तो उनका घनत्व तो बढ़ता ही है, साथ-साथ तापमान भी बढ़ता है। इसलिये गर्भ भाग का तापमान उसके संकुचन के साथ बढने लगता है और बढ़ते-बढ़ते करोड़ से

बढ़कर दस करोड़ तक पहुँचता है। ऐसी हालत में केंद्र के पास स्थित हीलियम का, एक नई न्यूक्लीय क्रिया में इंधन के रूप में भाग लेना संभव हो जाता है।

जैसे हम हाइड्रोजन के चार न्यूक्लियस एक जगह लाकर हीलियम का न्यूक्लियस बना पाये क्या उसी तरह हम हीलियम के न्यूक्लियस में और प्रोटान, न्यूट्रान भरकर उससे बड़े न्यूक्लियस नहीं बना सकेंगे ? और क्या ऐसे संलयन से हमें और ऊर्जा मिल सकेगी ?

न्यूक्लीय भौतिकी एवं ज्योतिर्विदों के इस प्रश्न पर बहुत माथापच्ची करने के बाद आखिर इस प्रश्न को फ्रेड हायेल ने हल किया। कठिनाई यह थी कि हीलियम से आगे वाले परमाणु जैसे लिथियम, बेरिलियम, बोरान स्वयं संतुलित नहीं हैं....बनते-बनते टूट जाते हैं। अत: कई वर्ष तक वैज्ञानिकों के सामने यह प्रश्न बना रहा कि हीलियम का संलयन कर और बड़े न्यूक्लियस कैसे बन सकते हैं।

हायेल के उत्तर के अनुसार दो के बजाय तीन हीलियम न्यूक्लियस आदि एक साथ निकट आयें तो उससे कार्बन न्यूक्लियस बन सकेगा। कार्बन का परमाणु भार 12 होता है जबकि हीलियम का 4, यानी उसका एक तिहाई। यह संलयन क्रिया किस हालत में हो सकती है इसकी हायेल ने चर्चा की और वे इस नतीजे पर पहुँचे कि यद्यपि यह क्रिया हर वक्त नहीं हुआ करती, फिर भी जब हो जाती है तो तेजी से होती है।

इसका उदाहरण हम लाटरी से दे सकते हैं। लाटरी से पैसा मिलने की संभावना तो बहुत कम होती है पर जब किसी भाग्यवान व्यक्ति को वह मिल जाती है तब वह एकाएक बहुत धनवान हो जाता है। ठीक यही बात हीलियम कार्बन क्रिया में भी होती है। क्रिया के लिए तीन हीलियम के न्यूक्लियस एक ही समय टकराएँ इसकी संभावना कम है लेकिन यदि वे टकरा जाते हैं तो उनके संलयन द्वारा कार्बन बनने की क्रिया तेजी से पूरी होती है।

तो इस क्रिया से ऊर्जा निकलती है, ठीक उसी $E = Mc^2$ समीकरण की वजह से जो हाइड्रोजन के हीलियम में रूपांतर के लिये जिम्मेदार था। इस ऊर्जा के कारण

तारे के गर्भ भाग में दबाव फिर से बढ़ जाते हैं जो गुरुत्वाकर्षण का सफलता से मुकाबला कर पाते हैं। इतना ही नहीं, इन दबावों की प्रतिक्रिया तारे के बाहरी आवरण पर भी पड़ती है। एक गुब्बारे की तरह गर्भ के बाहर स्थित आवरण फूलने लगता है।

बाहरी आवरण के फूलने से वहाँ की वायु ठंडी हो जाती है। इस परिणाम को हम तारे के पृष्ठ भाग पर देख पाते हैं। तापमान गिरने के कारण कृष्णिका विकिरण
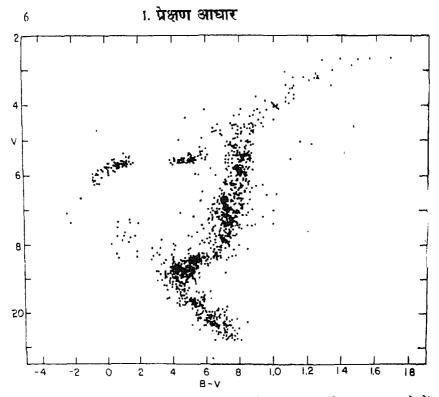
चित्र 20. एक तारों के समूह का **H–R** चित्र जिसमें अधिकांश तारे दानव बन चुके हैं।

(परिच्छेद-4) के नियमों के अनुसार तारे का बाहरी रंग बदलकर लाल हो जाता है जिन्हें H-R चित्र में हम लाल दानव के नाम से पहचानते हैं। वे तारे इस प्रकार अपना विशाल रूप धारण करते हैं। अपने मूल व्यास से दानवाकार तारे का व्यास सौ-दो सौ गुना या इससे भी अधिक हो जाता है। हमारा सूर्य भी दानव रूप धारण करते समय फूलकर निकटतर ग्रहों को, जिसमें पृथ्वी भी समाहित है, निगल जायेगा। लेकिन हमें इस भयानक भविष्य की चिंता करने की आवश्यकता नहीं क्योंकि यह घटना पाँच अरब से अधिक वर्षों बाद होने वाली है।

यद्यपि सूर्य जैसा तारा मुख्य अनुक्रम पर अरबों वर्ष बिताता है तो भी दानवावस्था में प्रवेश करने पर उसका फूलना कई लाख वर्षों में ही पूरा हो पाता है। इस फूलने की क्रिया में वह H–R चित्र में मुख्य अनुक्रम से दाहिनी ओर ऊपरी कोने की तरफ जाने लगता है जैसा कि चित्र-क्रमांक 20 में दर्शाया गया है।

इस दानवावस्था में तारे एक महत्वपूर्ण कार्य करते हैं जिसका हम अब विवरण देंगे।

दो वैज्ञानिक चाय पीते-पीते चर्चा कर रहे थे कि तारों में परिवर्तन कब, कैसे और क्यों होते हैं। पास की मेज़ पर उनकी बातें एक शराबी सुन रहा था।

—"तो मेरा गणित यह बताता है कि कोई पाँच अरब वर्ष में सूरज दानव तारा बनेगा" पहला वैज्ञानिक बोला।

—"कितना फूलेगा वह ?" दूसरे ने पूछा।

—"कोई ढ़ाई सौ गुना! यानी वह पृथ्वी को भी निगल जायेगा।"

अब शराबी महाशय से रहा न गया। वे हड़बड़ा कर वहाँ आये और बोले "कितनी भयानक भविष्यवाणी की आपने! क्या पाँच लाख साल में पृथ्वी चौपट हो जायेगी ?"

पाँच लाख नहीं पाँच अरब वर्षों में" वैज्ञानिक एक साथ बोले। शराबी महाशय एकदम आश्वस्त होकर बोले "पाँच अरब वर्ष। तब तो चिंता की बात नहीं। मैं तो पाँच लाख समझ रहा था।"

□□

7

मूल तत्वों का निर्माण

जब तुम किसी धातु की तश्तरी में खाना खाते हो तब क्या तुमने कभी सोचा है कि वह धातु कहाँ से आई ? हो सकता है कि इस प्रश्न का उत्तर तुमने यह सोचा हो कि वह धातु पृथ्वी के पेट से आई — पृथ्वी की सतह के नीचे की खानों से। लेकिन जरा आगे सोचो कि उन खानों में वह कहाँ से आई ?

यही हाल है उन खाद्य पदार्थों का जो तुमने उस तश्तरी में खाये। आटा, दाल, चावल, सब्जियाँ इत्यादि हमें पृथ्वी पर भले ही मिलें लेकिन उनके मूल उद्गम स्थान क्या हैं ?

वैज्ञानिक जानते हैं कि सभी पदार्थ रासायनिक मूल तत्वों के बने हैं जिनकी संख्या करीब 109 मानी जाती है। प्रत्येक तत्व के परमाणु के गर्भ भाग या न्यूक्लियस में धनात्मक विद्युत आवेश के प्रोटान एवं विद्युत आवेश रहित न्यूट्रान होते हैं जबकि बाहरी भाग में ऋणात्मक विद्युत आवेश के इलेक्ट्रान विभिन्न स्थितियों में चक्कर लगाते रहते हैं। न्यूक्लियस के संपूर्ण कणों की संख्या को उस तत्व का परमाणु भार कहते हैं और प्रोटानों की संख्या को परमाणु संख्या। उदाहरण

स्वरूप कार्बन का परमाणु भार 12 एवं परमाणु संख्या 6 है क्योंकि उसके न्यूक्लियस में 6 प्रोटान एवं 12 – 6 = 6 न्यूट्रान मौजूद हैं।

विज्ञान हमें यह भी बताता है कि तत्व के रासायनिक गुण उसके न्यूक्लीय विद्युत आवेश यानी परमाणु संख्या पर निर्भर करते हैं। एक ही परमाणु संख्या के लेकिन विभिन्न परमाणु भारों के न्यूक्लियस आइसोटोप कहलाते हैं। उदाहरण स्वरूप "भारी हाइड्रोजन" हाइड्रोजन का आइसोटोप है। इसमें हाइड्रोजन के समान एक ही प्रोटान न्यूक्लियस में होता है परंतु उसके अलावा एक न्यूट्रान भी होता है। जैसे पानी साधारण हाइड्रोजन एवं आक्सीजन के संयोग से बनता है वैसे ही "भारी पानी" भारी हाइड्रोजन एवं आक्सीजन से बनता है।

इस सदी के पहले दो दशकों तक वैज्ञानिकों की यह धारणा बनी रही कि मूल तत्व अभेद्य हैं और एक दूसरे में रूपांतरित नहीं किये जा सकते। पारे से सोना बनाने के रसायनिक प्रयत्न अनेक देशों में अनेकों ने किये जो असफल रहे। क्योंकि पारे और सोने के न्यूक्लियस ऐसे भागों से एक दूसरे में बदले नहीं जा सकते। इसका प्रमुख कारण यह है कि न्यूक्लियस के रूपांतर के लिये हमें उसके कणों की संख्या में परिवर्तन करना पड़ेगा। लेकिन तीव्र पारस्परिक आकर्षण के कारण इन कणों को एक दूसरे से दूर करना सहज बात नहीं। यह अगर सहज नहीं है तो असंभव भी नहीं है। न्यूक्लीय भौतिकी के विकास से अब यह संभव हो सका है। परमाणु भट्टियाँ एवं परमाणु बम इस संभवनीयता के द्योतक हैं। यूरेनियम, प्लूटोनियम के आइसोटोपों के न्यूक्लियस को विभक्त करके या फिर हाइड्रोजन के न्यूक्लियस जोड़कर ऊर्जा प्राप्त की जा सकती है। इस तथ्य के प्रतीक आज के न्यूक्लियर रिएक्टर एवं हाइड्रोजन बम हैं।

अब अपने प्रश्न का उत्तर खोजने के लिये हमें यह पता करना होगा कि प्रकृति की विभिन्न रचनाओं के न्यूक्लियस जो हम पृथ्वी पर परमाणुओं में पाते हैं, वे कैसे बने, कहाँ बने, कब बने इत्यादि।

अंतरिक्ष की परमाणु भट्टियाँ

इन प्रश्नों का उत्तर हमें तारों के अध्ययन से मिलता है। हम देख चुके हैं कि मुख्य अनुक्रम के तारे अपने केंद्र भाग में हाइड्रोजन का रूपांतर हीलियम में करते हैं। फिर उनके दानवावस्था में प्रवेश करते समय हीलियम का रूपांतरण कार्बन में होता है। हाइड्रोजन का परमाणु भार 1 है तो हीलियम का 4 और कार्बन का 12। क्या हम इसी सीढ़ी से आगे चलकर तारों में और भी बड़े न्यूक्लियस बनते देखते हैं ?

1950-60 के दशक में न्यूक्लीय भौतिकी द्वारा तारों के अंतर्भाग का अध्ययन जोरों से चालू हुआ। इलेक्ट्रानिक कंप्यूटरों के विकास से इस अध्ययन में बहुत सहायता मिली, क्योंकि वे एडिंग्टन के समीकरण एवं न्यूक्लीय क्रियाओं की जानकारी, दोनों का समन्वय करके सैद्धांतिक ज्योतिबिंदु तारों के मॉडल अच्छी तरह बना पाए। ऐसे ही प्रयत्नों से हमें ऊपर दिये प्रश्नों के उत्तर मिलने लगे।

1957 में मार्ग्रेट बर्बिज, जेफरी बर्बिज, विलियम फाउलर एवं फ्रेड हायेल इन चार वैज्ञानिकों के संयुक्त प्रयत्नों की वजह से हमें यह विश्वास होने लगा कि ब्रह्माण्ड में पाये जाने वाले अधिकांश मूल तत्व तारों के भीतर की परमाणु भट्टियों में बने हैं। हम अब संक्षेप में यह देखेंगे कि इन भट्टियों का योगदान कैसे और कब होता है।

याद रहे कि अब तक हम न्यूक्लीय संलयन द्वारा कार्बन तक पहुँच चुके हैं। इससे आगे जाने के लिए हमें कार्बन के न्यूक्लियस में और भी प्रोटान एवं न्यूट्रान भरने हैं।

जब तुम किसी लंबी यात्रा के लिये घर से निकलते हो तो खर्चे के लिए साथ में पैसे रखते हो। यद्यपि देश में धन गिनने की इकाई "रुपया" है फिर भी तुम सभी एक रुपये के नोट साथ नहीं लेते। पाँच, दस, बीस या सौ-पचास के नोट लेना अधिक सुभीते का होता है। यदि रेल टिकट के लिये तुम्हें 37 रुपये देने हों तो टिकट बाबू को पाँच के आठ नोट थमाकर उससे तीन रुपये वापिस लेना तुम्हें एक

रुपये के 37 नोट देने की अपेक्षा अधिक मुनासिब होगा।

परमाणु संलयन द्वारा बड़े न्यूक्लियस बनाते समय भी एक-एक न्यूट्रान या प्रोटान जोड़ने की बजाय 2 न्यूट्रान एवं 2 प्रोटान का संयुक्त कण जिसे अल्फा कण (α) कहते हैं, जोड़ते जाना अधिक सुविधाजनक व मुनासिब है। चार परमाणु भार वाला यह कण तुमने पहचान ही लिया होगा — यह हीलियम का न्यूक्लियस है। हायेल की बताई संलयन क्रिया से हम कार्बन बना चुके हैं जिसमें 3 अल्फा कण जोड़े गये। इस क्रिया को हम संक्षेप में इस प्रकार लिखते हैं:

$$3\alpha \rightarrow C^{12}$$

इस न्यूक्लियस समीकरण में C अक्षर कार्बन का द्योतक है तथा उसके सिर पर उसका परमाणु भार (12) लिखा है। इस क्रिया को "तिहरी अल्फा क्रिया" कहते हैं। आगे चलकर "अल्फा क्रिया" में हम न्यूक्लीय संलयन द्वारा एक-एक अल्फा कण जोड़ते जाते हैं:—

$\alpha + C^{12} \rightarrow O^{16}$ (ऑक्सीजन)

$\alpha + O^{16} \rightarrow Ne^{20}$ (निऑन)

$\alpha + Ne^{20} \rightarrow Mg^{24}$ (मैग्नेशियम)

$\alpha + Mg^{24} \rightarrow Si^{28}$ (सिलिकन)

$\alpha + Si^{28} \rightarrow S^{32}$ (गंधक)

इत्यादि।

यदि हमें इन संख्याओं (जिनमें 4 की वृद्धि है) के दरमियान परमाणु भार वाले न्यूक्लियस बनाने हों तो हम पास वाले न्यूक्लियस से एक-दो प्रोटान या न्यूट्रान निकालते या जोड़ते हैं — ठीक उसी प्रकार जैसे तुम पाँच का एक नोट भुनाकर टिकट बाबू से 37 रु. का टिकट खरीदते हो। फिर जैसे बड़े पैमाने पर धन के आदान-प्रदान के लिये बड़े नोट लिये जाते हैं वैसे ही उपरोक्त संलयन क्रिया में आगे चलकर α-कण के स्थान पर सिलिकन प्रयुक्त होता है। जैसे

$$Si^{28} + Si^{28} \rightarrow Fe^{56} \text{ (लोहा)}$$

लोहा, कोबाल्ट और निकिल, इन धातुओं तक पहुँचते-पहुँचते संलयन की क्रिया समाप्त हो जाती हैं। इसका कारण यह है कि किसी भी न्यूक्लियस में दो विरोधी बल काम करते हैं। एक बल है, न्यूक्लीय आकर्षण का जो न्यूट्रान, प्रोटान दोनों पर समान रूप से प्रभाव डालता है लेकिन एक सीमित दूरी तक ही। बड़े न्यूक्लियस का (जिसमें काफी कण मौजूद रहते हैं) आकार बड़ा होने से उसके कणों के बीच की दूरियाँ लंबी होती है और आकर्षण का यह बल उतना प्रभावशाली नहीं रह पाता है। इसके अलावा दूसरा बल वैद्युतीय प्रतिकर्षण भी न्यूक्लियस की रचना को शिथिल करता है। यह बल केवल प्रोटान-प्रोटान के बीच होता है और न्यूक्लीय आकर्षण के मुकाबले कमजोर होता है। लेकिन बड़े न्यूक्लियस में अधिक प्रोटान मौजूद रहने के कारण यह प्रतिकर्षण का बल नगण्य नहीं होता।

कल्पना करो कि किसी नये शहर में प्रतिदिन बाहरी व्यक्ति निवास के लिये आ रहे हैं। जब शहर छोटा था तब नये व्यक्तियों का आना लाभदायक था क्योंकि व्यापार, सेवाएँ, शिक्षा-संस्थान आदि को अच्छी तरह चलाने के लिये लोगों की आवश्यकता थी। लेकिन एक निश्चित मर्यादा के आगे शहर की जनसंख्या का बढ़ना उचित नहीं। क्योंकि अत्यधिक निवासियों के लिये सुविधाएँ प्रदान करना, उन पर नियंत्रण रखना एवं उन्हें काम धंधे दिलाना संभव नहीं। अत: ऐसे बढ़ती जनसंख्या वाले शहर में संघर्ष शुरू हो जाते हैं और सामाजिक स्थिरता ढलने लगती है।

यही हाल बड़े न्यूक्लियस का होता है। लोहे तक के न्यूक्लियस हम संलयन द्वारा तारों की प्रोटान भट्टियों में बना सकते हैं लेकिन इस सीमा को लांघना इन क्रियाओं के लिए संभव नहीं।

तो फिर लोहे से बड़े न्यूक्लियस कहाँ और कैसे बने ?

बर्बिज, बर्बिज, फाउलर, हॉयेल की चौकड़ी ने कुछ अन्य क्रियाओं का विवरण दिया जो अधिकांश रूप से दानवी तारों में होती हैं। इन क्रियाओं द्वारा न्यूक्लियस के न्यूट्रानों या प्रोटानों की संख्या बढ़ाना संभव होता है। हाँ,लोहे के प्रोटान भार 56 से आगे जाते समय ऐसी क्रिया से ऊर्जा नहीं मिलती, बल्कि उस भारी न्यूक्लियस

को बनाने के लिये ऊर्जा का व्यय करना पड़ता है। लेकिन जहाँ न्यूट्रान या प्रोटान स्वतंत्र रूप से अधिक संख्या में और अतितप्त अवस्था में मौजूद रहते हैं वहाँ उनकी बौछार से लोहे जैसा न्यूक्लियस क्रमश: बड़े न्यूक्लियस में परिवर्तित हो जाता है।

अब तो तुम जान ही गये होगे कि तुम्हारी कलम या गहने, या तुम्हारे रसोईघर के बर्तन, थर्मामीटर का पारा एवं जिन तत्वों से तुम खुद बने हो वे सभी रासायनिक मूल तत्व किसी समय एक तारे के पेट में अतितप्त अवस्था में निर्मित हुए थे।

मूल तत्वों का अंतरिक्ष में बिखराव

सामान्यत: हम ऐसा देखते हैं कि हीलियम से लेकर लोहे तक के मूलतत्वों के न्यूक्लियस बनाने के लिये जो परमाणु भट्टियाँ काम करती हैं उनके तापमान क्रमश: बढ़ते जाते हैं। यानी हाइड्रोजन से हीलियम बनाने के लिये आवश्यक है कि तापमान करोड़ अंश के आसपास हो और लोहा बनाने के लिये उससे सौ गुना या अधिक तापमान चाहिये।

हम हीलियम से कार्बन बनाने की प्रक्रिया के सिलसिले में देख चुके हैं कि बढ़ते तापमान तारे के गर्भ भाग के सिकुड़ने से पैदा होते हैं। जब कोई प्रक्रिया बंद हो जाती है तब आंतरिक दबावों के घटने से गर्भ भाग सिकुड़ने लगता है। (कारण ? उसका अपना गुरुत्वाकर्षण !) सिकुड़न के साथ उसका आंतरिक तापमान बढ़ता जाता है। जब वह बढ़ते-बढ़ते अगली प्रक्रिया के लिये पर्याप्त हो जाता है तब वह प्रक्रिया फिर शुरु हो जाती है।

उदाहरण के लिए जब हीलियम से कार्बन बनाने वाली प्रक्रिया बंद हो जाती है तब गर्भ भाग का सिकुड़ना प्रारंभ होता है। यह केंद्रीय तापमान बढ़ते-बढ़ते इस हद तक पहुंचता है कि:

$$\alpha + C^{12} \longrightarrow O^{16}$$

की प्रक्रिया शुरू हो जाती है और इससे तारे का बहिरंग और भी फूलता है। इस प्रकार दानवावस्था में तारा तब तक फूलता जाता है जब तक उसके भीतर विभिन्न परमाणुओं के आवरण बनते जाते हैं। वैज्ञानिकों ने ऐसे तारे की उपमा प्याज से की है जिसके छिलके भिन्न-भिन्न मूलतत्वों के न्यूक्लियस के बने रहते हैं। चित्र क्रमांक 21 में हम ऐसे अनेक छिलकों के बने तारे के प्याज को देखते हैं। जैसे-जैसे हम बाहरी छिलके निकालकर भीतर झाँकते हैं, हमें अधिकाधिक परमाणु भार के
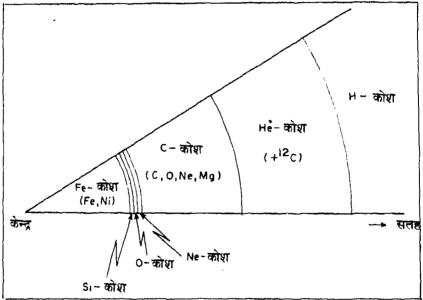
चित्र 21. दानव तारे का अंतर्भाग प्याज के छिलकों के समान है। प्रत्येक छिलका एक रासायनिक मूलतत्त्व का बना है। अधिक अंदरूनी छिलकों में अधिक परमाणुभार के तत्त्व पाये जाते हैं। ऐसे तारे का एक हिस्सा।

न्यूक्लियस दिखाई देते हैं। सबसे बाहर है हाइड्रोजन तथा गर्भ भाग में लोहा, निकिल एवं कोबाल्ट।

लेकिन यदि हम इन मूलतत्वों को ब्रह्माण्ड के कोने-कोने में पाना चाहें तो यह आवश्यक है कि किसी क्रिया के फलस्वरूप ये मूलतत्व, तारे के विभिन्न भीतरी भागों से बाहर आयें नहीं तो तारे के गर्भ भाग में दबे लोहे से हमें क्या वास्ता ? ऐसी कौन सी प्रक्रिया है जो तारे को फोड़कर उसके भीतर दबे मूलतत्वों को चारों ओर बिखरा देती है ? हम अब ऐसी प्रक्रिया की जानकारी प्राप्त करेंगे।

□

8

हाय! फूटा मेरा तारा

यह घटना सन 1054 की है जब चीन में चीन्हो वंश के राजा राज्य करते थे। तत्कालीन चीनी कालमापन के अनुसार वर्ष के पाँचवे महीने का वह "ची चाउ" दिवस था जबकि राज-दरबार के ज्योतिषी ने आकाश में एक विचित्र घटना देखी। "थियन-कुआन" के उत्तर पूर्व भाग में एक नया तारा अवतीर्ण हुआ था, जो दिन में भी दिखाई देता था। उसने तत्काल राजा को सूचित किया।

चीन के राजाओं की यह धारणा थी कि यदि उनके द्वारा कोई पाप या अत्याचार होता है तो चेतावनी के रूप में भगवान आकाश में कोई विचित्र घटना या उत्पाद प्रकट करते हैं। इसलिये राजदरबार के ज्योतिषियों का यह फर्ज था कि किसी भी अपूर्व घटना की (जो आकाश में उन्हें दिखाई दे) राजा को सूचना दें।

इसी वजह से ज्योतिषी नक्षत्रों के ब्यौरे अच्छी तरह रखा करते थे। आज के ज्योतिर्विदों को इन ब्यौरों से फ़ायदा होता है क्योंकि उन्हीं ब्यौरों के बल पर हम 1054 की उस विचित्र घटना को अच्छी तरह समझ सकते हैं।

आज के कैलेंडर के अनुसार वह दिन था 4 जुलाई 1054 और वह तारा प्रकट

हुआ था ऋषभ राशि में "झीटा टाउरी" नक्षत्र में। उस तारे की चमक प्रात:कालीन शुक्र ग्रह से पाँच गुनी ज्यादा थी। इसीलिये चीनी ज्योतिषी तारे को दिन में देख सके। हाँ वह तेजस्विता शीघ्र ही कम हो गई। कुछ ही दिनों में वह तारा केवल रात ही में दिखाई देने लगा और साल भर में वह फीका होते-होते अदृश्य हो गया।
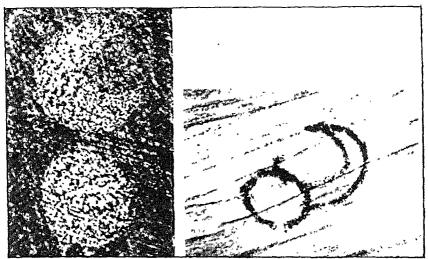
चित्र 22. **नवाओ कैनियन एवं व्हाइट मेसा में पाये गये चित्रों के ये फोटो विलियम मिलर ने खींचे।**

चीनियों ने उसे "अतिथि तारा" कहा। अतिथि के समान वह अचानक आकाश में आया, कुछ दिन वहाँ ठहरा और फिर चला गया ! वह अजीब तारा कैसे अवतीर्ण हुआ ? आज उस स्थान पर क्या है ? इन प्रश्नों का उत्तर पाने से पहले हम विश्व के दो भागों का जिक्र करेंगे जहाँ के लोगों ने यह अपूर्व घटना देखी थी।

विलियम मिलर नाम के कैलिफोर्निया की पैलोगार वेधशाला के एक वैज्ञानिक द्वारा खींचे फोटोग्राफ (चित्र क्रमांक 22) को देखें। अमेरिका के रेड इंडियनों द्वारा नवाहो कैनियन एवं व्हाइट मेसा भागों में गुफाओं पर चित्रांकित एवं चट्टानों पर

खुदी इन तस्वीरों में चाँद के साथ एक गोल तारा सा दिखाया गया है। विलयम मिलर का अनुमान है कि जिस दिशा में और जिस दूरी पर ये दोनों (चाँद की कला एवं तारा) दिखलाए गये हैं, उन से यह निष्कर्ष निकलता है कि चित्रकारों ने उसी अतिथि तारे का चित्रण किया है।

एक और संदर्भ मिलता है मध्य पूर्व से, जिसकी जानकारी आल्फ्रेड एवं एलिनॉर लीवर तथा केनेथ ब्रेशर ने 1978 में खोज निकाली। इब्न बुतान नामक एक इसाई डाक्टर ने, जो बगदाद, काहिरा एवं इस्तंबूल में रह चुका था, एक दर्शनीय तारे का जिक्र किया है जो 12 अप्रैल 1054 एवं 1 अप्रैल 1055 के बीच कभी दिखाई दिया था। यद्यपि ये रिकार्ड चीनी ज्योतिषियों जैसे विस्तार पूर्वक नहीं हैं फिर भी तारे का वर्णन, उसकी दिशा एवं प्रकट होने का काल देखकर यह निस्संदेह कहा जा सकता है कि यह वही तारा था।

चित्र 23. **क्रैब नेबुला** (इंडियन इंस्टिट्यूट आफ एस्ट्रोफिजिक्स द्वारा)

जापानियों ने भी चीनियों की तरह तारों के ब्यौरे रखे थे जिसमें इस तारे का भी ब्यौरा है। आश्चर्य की बात यह है कि भारत में इसके संदर्भ में कोई ब्यौरा अब तक नहीं मिला। हो सकता है कि इस घटना का वर्णन किसी संस्कृत पांडुलिपि में हो जो किसी पुराने ग्रंथागार में पड़ी हो!

आज उस तारे की जगह हम क्या देखते हैं ? चित्र क्रमांक 23 में दर्शित क्रैब नेबुला वहाँ पाया जाता है जो मानवी नेत्रों को नहीं दिखाई देता पर दूरबीनों द्वारा खींचे फोटो पर अंकित होता है। ठीक उसी जगह जहाँ चीनियों ने थोड़े काल के लिये वह चमकदार तारा देखा था। वह तारा अब नहीं रहा, पर वहाँ जो घटना घटी उसके परिणाम स्वरूप यह चमकीला वायुमेघ गवाह के रूप में आज भी मौजूद है।

सुपरनोव्हा

क्रैब नेबुला इस प्रकार एक अवशेष है एक भग्न तारे का। एक ऐसे तारे का जो किसी समय दानवावस्था में था और फूलते-फूलते एकाएक अपना संतुलन खो बैठा। यह संतुलन क्यों विचलित हुआ ? तारे में ऐसा क्या हुआ जिसके कारण वह एकाएक फूटा ?

इन प्रश्नों का उत्तर पाने के लिये हम दानव तारे की दशा को फिर से देखेंगे। याद रहे कि इस तारे का गर्भ भाग अतितप्त अवस्था में . . . अरब अंश से भी अधिक तापमान का . . . परमाणु भट्टी में अधिकाधिक न्यूक्लियस बनाता जाता है। यह न्यूक्लीय संलयन की क्रिया लोहे तक पहुँचकर रुक जाती है। लोहे से बड़े न्यूक्लियस इस क्रिया द्वारा नहीं बनाये जा सकते।

जब तक ये क्रियाएँ चालू रहती है, गर्भ भाग से ऊर्जा निकलती रहती है जिसकी वजह से तारा चमकता तो रहता है पर उसका बाहरी भाग फूलता जाता है। पर जब ये क्रियाएँ बंद हो जाती हैं तब ?

तब जैसा कि हम पहले भी देख चुके हैं कि ऐसी हालत में गर्भ भाग फिर से सिकुड़ने लगता है और सिकुड़ते-सिकुड़ते अधिक गर्म होता जाता है। लेकिन

सिकुड़ते-सिकुड़ते उसका घनत्व भी बढ़ता जाता है और एकाएक ऐसी परिस्थिति आ जाती है कि जब उसकी सिकुड़न रुक जाती है।

इसका कारण यह है कि अति सूक्ष्म पदार्थों (परमाणुओं एवं उनके भागों) पर भौतिकी के नियम अपना प्रभाव दिखलाने लगते हैं। इन नियमों के अनुसार न्यूक्लियस के अंदरूनी कण प्रोटान एवं न्यूट्रान एक दूसरे में परिवर्तित होने लगते हैं।

यदि अपनी भौतिक प्रयोगशाला में हम न्यूट्रान का अवलोकन करें तो हमें पता चलेगा कि यह अकेले अधिक समय तक टिक नहीं सकता। वह प्रोटान में परिवर्तित हो जाता है:

$$n \longrightarrow p + e + \bar{\nu}$$

यानी न्यूट्रान के क्षय से प्रोटान, इलेक्ट्रान एवं ऐंटी-न्यूट्रीनों बनते हैं। तारे के गर्भभाग में ठीक इसके विपरीत क्रिया चलती है·

$$p + e \longrightarrow n + \bar{\nu}$$

यानी प्रोटान एवं इलेक्ट्रान के संयोग से न्यूट्रान एवं न्यूट्रीनों बनते हैं। न्यूट्रीनों हलके (नगण्य द्रव्यमान के) कण हैं जो प्रकाश की गति से चलते हैं।

इस प्रकार सिकुड़ते गर्भ भाग में न्यूट्रान कणों की आबादी बढती जाती है और यहां क्वांटम. सिद्धांत का एक नियम जिसे "पाउली का नियम" कहते हैं प्रभाव दिखलाने लगता है। यह नियम है कि किसी भी जगह बिलकुल एक जैसे कण नहीं टिक सकते। यानी, यदि हम किसी सीमित क्षेत्र में न्यूट्रान भरना चाहें तो एक निश्चित सीमा से आगे उनका घनत्व बढ़ नहीं सकता। इसलिए जब गर्भ भाग के सिकुड़ने के कारण न्यूट्रानों का घनत्व उस सीमा तक पहुँच जाता है तब उसके आगे सिकुड़ना असंभव है। जिस प्रकार जमीन पर पीटी हुई गेंद उछलकर ऊपर आ जाती है वैसे ही तारे का गर्भ भाग उछलकर फिर फूलने लगता है। मानों दबाव की क्रिया के प्रति अपनी विपरीत प्रतिक्रिया व्यक्त कर रहा हो।

यह घटना कुछ सेकंड में ही हो जाती है और इतने थोड़े समय में गर्भ भाग के एकाएक फूलने से तारा अपना संतुलन खो बैठता है। फूलते गर्भ के आगे-आगे वायु के दबाव बढ़ जातें हैं। यदि तुम पंप से गुब्बारे में हवा भर रहे हो और उसे, पंप तेजी से चलाकर एकाएक फुलाना चाहो तो हवा के बढ़े दबाव से गुब्बारा फूट जायेगा। ठीक इसी प्रकार गर्भ के एकाएक फूलने से बढ़े दबाव विस्फोटक रूप में तारे के बाहरी आवरण को छितरा देते हैं। इस प्रकार विस्फोटित तारे को सुपरनोव्हा कहते हैं।
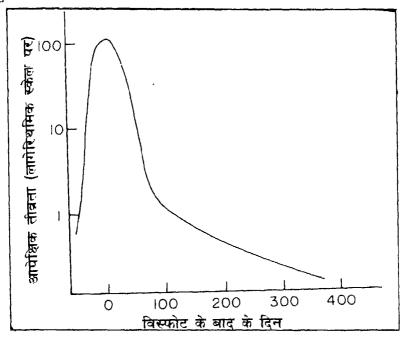
चित्र 24. सुपरनोव्हा के विस्फोट के उपरांत उसके प्रकाश में कैसे तीव्र परिवर्तन होते है वे इस रेखाचित्र में दर्शित हैं। यहाँ समय विस्फोट के बाद दिनों में गिना गया है एवं तारे की तेजस्विता के घटने बढ़ने का अनुपात ऊर्ध्व अक्ष पर है।

यह तारे का फूटना बड़ा प्रभावशाली दृश्य होगा जो दूर से देखना ही मुनासिब होगा। फूटते समय तारे का प्रकाश कुछ अल्पकाल के लिये सैकड़ों अरब गुना बढ जाता है। उसमें से प्रोटान, इलेक्ट्रान, न्यूक्लियस जैसे छोटे बड़े कणों की बौछार निकलती है, न्यूट्रीनों भी निकलते हैं।

यह विस्फोट कुछ क्षणों का ही होता है पर तारे का प्रकाश दो-तीन दिन तक तेजी से बढ़ता है, फिर कुछ दिनों तक तेजी से घटता है और फिर उसमें धीरे-धीरे गिरावट आती है जैसा कि चित्र क्र. 24 में हम देखते हैं। प्रारंभ के कुछ दिनों में हम तारे को दिन में भी देख सकते हैं लेकिन, जैसा कि क्रैब नेबुला के बारे में हुआ, साल दो साल के बाद वहाँ अपनी आँखों से हम रात में भी कुछ नहीं देख सकते। दूरबीनों द्वारा खींचे फोटोग्राफ ही हमें विस्फोट के अवशेष दिखला सकते हैं।

1987 का सुपरनोव्हा

क्रैब नेबुला वाला सुपरनोव्हा हमारी आकाशगंगा में है और उसकी हमसे दूरी कोई 6000 प्रकाश वर्ष है। उसके पश्चात् हमारी आकाशगंगा में दो और मशहूर तारा विस्फोट देखे गये जिन के निरीक्षण मशहूर वैज्ञानिकों ने किये . . . टाइको ब्राहे ने 1572 में एवं योहान केप्लर ने 1604 में। वास्तव में तारा विस्फोटों की संख्या इससे कहीं अधिक है लेकिन आकाशगंगा में वितरित धूल में उनका प्रकाश शोषण की वजह से हम तक पहुँच नहीं पाता। वैज्ञानिकों का तर्क है कि सुपरनोव्हा की घटनाएँ हमारी आकाशगंगा में प्रति शताब्दी दो या तीन तक हुआ करती हैं।

अच्छी दूरबीनों द्वारा अन्य आकाशगंगाओं के तारा विस्फोट देखे जा सकते हैं। अब तक देखे गये ऐसे विस्फोटों की संख्या 500 से कहीं अधिक है। हाल ही में, सन् 1987 में आकाशगंगा के निकटतम पड़ोसी मैजेलन के बड़े मेघ* में एक सुपरनोव्हा देखा गया था। सैंडुलीक नामक नीले महादानवी तारे के विस्फोट से यह

* इस मेघ को पुर्तगाली यात्री फर्डिनंड मैजेलन ने सन् 1521 में दक्षिण गोलार्ध से देखा था। ये एवं पड़ोसी छोटा मेघ दोनों उस नाम से जाने जाते हैं।

चित्र 25. मैजेलन के मेघ। बड़े मेघ में एक सुपरनोव्हा हाल ही में देखा गया।

घटना घटी और इसका निरीक्षण (इस पुस्तक के लिखते समय भी) जारी है। चित्र क्रमांक 25 में मैजेलन के मेघों का फोटो देखो।

इस सुपरनोव्हा की खोज कैसे हुई यह घटना भी रोमांचकारी है और संक्षेप में इस प्रकार है। 23 फरवरी, 1987 की रात में दो बजे थे। चिली की लास कंपानास वेधशाला में इयन शेल्टन अब थके माँदे अपना निरीक्षण कार्य समाप्त करके घर जाने की जल्दी में थे। जाने से पहले उन्होंने सोचा कि आकाशदर्शन की अपनी अंतिम फोटोग्राफिक प्लेट को जरा देखें जो अभी-अभी तैयार होकर आई है।

शेल्टन ने प्लेट पर नजर डाली तो उन्हें अपनी आँखों पर विश्वास नहीं हुआ। अन्य धुंधले तारों के बीच एक चमकदार तारा उन्हें दिखाई दिया। यह तारा कहाँ से

9

श्वेत बटु से कृष्ण विवर तक

तारा विस्फोट की नाट्यमय घटना हमने पिछले परिच्छेद में देखी। सवाल यह उठता है कि क्या प्रत्येक तारा अपने जीवन की समाप्ति ऐसे विस्फोट में करता है ? क्या हमारा सूरज भी किसी समय फूटकर अंतरिक्ष में बिखरेगा ?

इस प्रश्न का उत्तर हम एक मानवी उदाहरण से दे सकते हैं।

लाला गोटूमल ने अपनी चालीसवीं वर्ष गाँठ के अवसर पर जो बड़ा भोज आयोजित किया था उसमें उनके डाक्टर भी निमंत्रित थे। भोज में लालाजी को लड्डुओं के ढेर पर हाथ साफ करते देख डाक्टर साहब से रहा न गया।

"जरा संभल के लालाजी ! अब आपको अपनी तंदुरुस्ती का ख्याल रखते हुए इन मिष्ठानों से जरा बचकर रहना चाहिये।"

"क्यों जी ?" लालाजी ने चौंकन्ने होकर पूछा। उन्हें लगा मानो मिष्ठान में जहर भरा है।

"आपका वजन कितना है ?" डाक्टर साहब ने प्रति प्रश्न किया।

"होगा जी कोई नब्बे किलो" लाला जी दस प्रतिशत छूट लगाकर बोले।

"आपके कद के लिये 70 किलो काफी है। इससे अधिक भार आपके शरीर के लिये हानिकारक होगा। दिल की बीमारी, और भी कई रोग आप पर हमला करने के लिये बाट जोह रहे हैं।"

डाक्टर साहब की चेतावनी पर लाला जी ने क्या कार्यवाही की, यह नहीं मालूम। या तो उन्होंने "डाएटिंग" करके, वजन घटाया, या उस चेतावनी को लड्डुओं के ढेर के नीचे दबोचा . . .

तारों की भी यही हालत है। साधारण तौर पर सूर्य से पाँच गुना द्रव्यमान, तारे के लिये एक खतरनाक सीमा है। यदि दानवावस्था में तारे का द्रव्यमान इससे कहीं अधिक हो तो वह अपना आंतरिक संतुलन नहीं रख सकता और सुपरनोव्हा के रूप में विस्फोटित हो जाता है। यदि इस सीमा से उसका द्रव्यमान कम है तो उसका भविष्य अधिक लंबा एवं शांत रहेगा। हमने पहला पर्याय देखा। अब दूसरे को देखें।

चित्र 26. प्लैनेटरी नेबुला (चित्र इंडियन इंस्टिट्यूट आफ एस्ट्रोफिजिक्स द्वारा)

श्वेत बटु

क्या लाला जी की तरह तारे डाएटिंग कर के अपना वजन घटा सकते हैं ? कुछ हद तक यह संभव है।

चित्र क्रमांक 26 में हम जो फोटो देखते हैं वह है ऐसी क्रिया का ! यह एक ग्रहाभ्रिका (प्लैनेटरी नेबुला) है, यानी चमकदार वायु का एक मेघ जिसका आकार एक अंगूठी जैसा है। ध्यान से देखने पर इसके केंद्र में एक तारा दिखाई देगा। इस तारे द्वारा पृष्ठभाग से बाहर फेंका हुआ यह मेघ उसी तारे के प्रकाश द्वारा प्रकाशित हो रहा है जैसे ग्रह सूर्य द्वारा प्रकाशित होते हैं। उसी वजह से इसे ग्रहाभ्रिका कहते हैं।

इस प्रकार तारा अपने आवरण से पदार्थ बाहर फेंककर अपना वजन घटा सकता है। अन्य उपाय है छोटे विस्फोटों का जो तारे के पृष्ठं भाग पर कभी-कभी हो जाते हैं। ऐसे विस्फोटों के समय तारा थोड़े काल के लिये अधिक तेजस्वी दिखता है। ऐसे उद्रेक को नोव्हा कहते हैं।

इस प्रकार से यदि तारा अपना वजन घटाकर सूर्य के लगभग डेढ़गुने (अधिक सही उत्तर है सूर्य के 1.44 गुने) द्रव्यमान से कम तक ला दे तो उसका भविष्यकाल एक पेंशनर की भांति शांति से बीतेगा। इस अवस्था में तारा श्वेत बटु के रूप में दिखाई देगा।

कल्पना करो कि तारा दानवावस्था में अपना न्यूक्लीय ईंधन इस्तेमाल कर चुका है। जैसाकि हमने आठवें परिच्छेद में देखा कि लोहे तक ही न्यूक्लीय संलयन द्वारा ऊर्जा पैदा की जा सकती है। अत: आगे चलकर तारे के पास ईंधन का अभाव होगा और ऊर्जा निर्माण करने में असमर्थ होने के कारण तारा अपने आंतरिक दबाव के भरोसे टिका नहीं रह सकता। ऐसी हालत में तारा अपने गुरुत्वाकर्षण के प्रभाव में सिकुड़ने लगेगा।

सिकुड़न के साथ ही तारे का घनत्व एवं उसका तापमान बढ़ते जायेंगे। पानी

से लाखों गुना घने एवं अतितप्त पदार्थ के गुण क्या होगें ? सन् 1932 में भारतीय वैज्ञानिक सुब्रह्मण्यम् चंद्रशेखर ने इस प्रश्न का अध्ययन करके एक महत्वपूर्ण नतीजा निकाला था। इसे आज "चंद्रशेखर सीमा" के नाम से जाना जाता है।

चंद्रशेखर सीमा, तारे का वह द्रव्यमान है जो सूर्य के द्रव्यमान से 1.44 गुना है। यदि तारे का द्रव्यमान इस सीमा से कम हो तो उसके भीतर नये दबाव पैदा हो जाते हैं जो उसकी सिकुड़न को रोकने में कामयाब होते हैं। ये दबाव क्वांटम सिद्धांत की वजह से पैदा होते हैं जिनका जिक्र हम पिछले परिच्छेद में कर चुके हैं।

इस नियम के अनुसार हम इलेक्ट्रॉन जैसे सूक्ष्म कणों को किसी भी जगह एक निश्चित सीमा से अधिक संख्या में नहीं रख सकते। यदि सिकुड़ते तारे के भीतर मौजूद इलेक्ट्रानों का घनत्व इस सीमा तक पहुँच जाता है तो उसका सिकुड़ना बंद हो जाता है, क्योंकि अधिक सिकुड़ने पर तारे का आयतन घटेगा और उसके भीतर के इलेक्ट्रानों का घनत्व इस सीमा से अधिक हो जायेगा।

चंद्रशेखर के गणित के अनुसार यदि तारे का द्रव्यमान सूर्य के द्रव्यमान के 1.44 गुने से कम हो तो उसके भीतर उपरोक्त स्थिति आ ही जाती है। यदि उसका द्रव्यमान इस सीमा से कहीं अधिक है तो ऐसी स्थिति कभी नहीं पैदा होती और तारे का सिकुड़ना जारी रहता है।

जो तारे चंद्रशेखर सीमा से कम द्रव्यमान के होते हैं वे संतुलित अवस्था में अपना अस्तित्व बनाये रहते हैं। इन तारों का आकार छोटा, उनकी तेजस्विता कम एवं रंग सफेद होता है। ये ही वे श्वेत बटु तारे हैं जिन्हें हमने हर्ट्स्प्रुंग-रसेल के चित्र में बाईं ओर के निचले भाग में देखा था।

इन तारों का द्रव्यमान चंद्रशेखर सीमा से कम होता है। यह निरीक्षण चंद्रशेखर के नतीजे की सत्यता सिद्ध करता है।

न्यूट्रान तारे और पल्सार

ऐसे तारों की क्या हालत होगी जिनका द्रव्यमान चंद्रशेखर सीमा से अधिक

हो ? खासकर, जब एक महाकाय तारा फूटकर सुपरनोव्हा बनता है और उसका गर्भ भाग इस सीमा से अधिक द्रव्यमान वाला होता है तब उसका भविष्य क्या होगा ? जैसा कि हमने पिछले परिच्छेद में देखा, गर्भ भाग अधिकांश तौर पर न्यूट्रान कणों का बना होता है।

जो नियम चंद्रशेखर ने इलेक्ट्रान कणों पर लगाया वही न्यूट्रानों पर भी लागू होता है। उनके गणित के द्वारा हम इस नतीजे पर पहुँचते हैं कि यदि गर्भ भाग का द्रव्यमान सूर्य की मात्रा के दुगुने से कम हो तो वह संतुलित रूप में रह सकता है।

ऐसे गर्भ भाग या वे तारे जो श्वेत बटु की द्रव्यमान सीमा से कहीं अधिक भारी थे, न्यूट्रान तारे के रूप में पाये जाते हैं। इनके केंद्र भाग का घनत्व श्वेत बटु से अरब गुना अधिक होता है। ऐसे तारों के व्यास बीस-चालीस किलोमीटर से अधिक नहीं होते। कल्पना करो, सूरज जैसा तारा सिकुड़ते-सिकुडते केवल बीस किलोमीटर व्यास का रह जाय तो कैसा प्रतीत होगा।

वास्तव में न्यूट्रान तारा आँखों से क्या दूरबीनों से भी नहीं दिखाई देता। इस हालत में हम उसके अस्तित्व को कैसे जान सकते हैं ?

इसका उत्तर मिला, अप्रत्याशित रूप से सन् 1968 में। जासलिन बेल नामक एक छात्रा ने केंब्रिज विश्वविद्यालय में अपने रेडियो दूरबीन के निरीक्षणों के दौरान कुछ विचित्र संदेश पाये। ठीक 1.3373011512 सेंकड के बाद आवर्तित होने वाले रेडियो संदेश अंतरिक्ष की एक दिशा से आ रहे थें। उनका रहस्य क्या था ?

जासलिन एवं उसके मार्ग दर्शक अध्यापक डा. टोनी ह्युइश ने इन संदेशों की छानबीन की।* उन्हें संदेह था कि शायद ये संदेश किसी ग्रह पर मौजूद सजीव प्राणी

* जब ट्रेन एक प्लेटफार्म से गुजरते समय सीटी बजाती है तब हमें उसकी तीव्रता में परिवर्तन का अनुभव होता है। जब ट्रेन हमारी ओर आती है तब आवाज कानों को तीखी लगती है। उलटे, जब ट्रेन हमसे दूर जाती है तब आवाज का तीखापन घटता है। कारण ध्वनि की लहरों का आवृत्तिकाल कम से अधिक हो जाता है। इसे डाप्लर प्रभाव कहते है, जो रेडियो लहरों पर भी लागू है।

भेज रहे हैं। उनके अनुसार ऐसा ग्रह किसी तारे की परिक्रमा करता होगा, अतः वहाँ से आने वाले संदेशों के आवृत्तिकाल के कम अधिक होने की अपेक्षा थी । लेकिन वैसा कोई परिवर्तन नहीं पाया गया। स्पष्ट था कि वे संदेश सजीवों के नहीं थे।

अब हम जानते हैं कि ऐसे संदेश न्यूट्रान तारों से आते हैं जो अपनी धुरी के चारों ओर तेज़ी से घूमते है। तारे के पृष्ठ भाग पर विद्युत-कणों का मंडल रहता है और उसका अपना चुंबकीय क्षेत्र भी। ऐसे क्षेत्र में धुरी के चारों ओर परिभ्रमण करने वाले इस मंडल से रेडियो लहरों के ये संदेश आते हैं। ऐसे सैकड़ों न्यूट्रान तारे हमारी आकाशगंगा में मौजूद हैं और उनके इस गुण को ध्यान में रखते हुए उन्हें "पल्सार" कहा जाता है।

इस प्रकार तारे की जीवन गाथा के अंतिम पृष्ठ उसकी दो संभाव्य दशाएँ बताते हैं . . . श्वेत बटु या पल्सार।

लेकिन लाला मोटूमल के किस्से के समान वे दोनों दशाएँ ऐसे तारों की हैं जो अपना द्रव्यमान सीमित रख पाते हैं। यदि तारे का द्रव्यमान इन सीमाओं से परे हो तो वह अपना संतुलन नहीं बनाए रखता। उसका आकुंचन जारी रहेगा। अब हम ऐसे तारे की स्थिति देखेंगे।

कृष्ण विवर

कल्पना करो एक फुटबाल खिलाड़ी गेंद ऊपर उछाल रहा है। वह जितनी तेज़ी से गेंद ऊपर मारेगा उतनी अधिक ऊँचाई तक वह जायेगी। लेकिन खिलाड़ी कितनी भी शक्ति से गेंद मारे, वह आखिर नीचे गिरती है, क्योंकि पृथ्वी का गुरुत्वाकर्षण उसे नीचे खींच लाता है।

मानवी शक्ति से परे क्या यह किसी यंत्र या बलशाली राकेट द्वारा संभव है कि वह उस गेंद को इस तेजी से ऊपर उछाले कि वह नीचे न लौटे?

इस प्रश्न का उत्तर है: हाँ, यह संभव है यदि गेंद को कम से कम 11.2 किलोमीटर प्रति सेकंड की गति से उछाला जाय।"

11.2 किलोमीटर प्रति सेकंड यानि 40,320 किलोमीटर प्रति घंटे। प्रवासी जेट विमानों की गति के 40 गुना। यह गति विशाल राकेटों के लिये साध्य है। ऐसे ही राकेटों द्वारा छोड़े गये अंतरिक्ष यान पृथ्वी छोड़ कर चाँद या मंगल तक जा पाये हैं।

इस गति को "मुक्ति गति" कहते हैं। पृथ्वी के खिंचाव से छुटकारा पाने के लिये इसी गति से इस ग्रह (पृथ्वी) को छोड़ना पड़ेगा। यदि पृथ्वी का गुरुत्वाकर्षण कुछ कम होता तो मुक्ति गति भी कम हो जाती। चंद्रमा के गुरुत्वाकर्षण से छुटकारा पाने के लिये मुक्ति गति केवल 2.4 किलोमीटर प्रति सेकंड है।

इसके विपरीत सूर्य पर मुक्ति गति 400 किलोमीटर प्रति सेकंड है। जब सूर्य श्वेत बटु बन जायगा तो उसकी सतह पर गुरुत्वाकर्षण इतना बढ़ जायेगा कि उससे छुटकारा पाने के लिये मुक्ति गति इससे सात गुनी अधिक होगी।

सारांश में, जितना अधिक सतह पर गुरुत्वाकर्षण बल होगा उतना ही अधिक परिश्रम हमें सतह छोड़ने में करना पड़ेगा और, जैसा हमने सूर्य के उदाहरण में देखा; यदि तारा बहुत घना होगा एवं बहुत ही आंकुचित दशा में होगा तो उसकी सतह पर गुरुत्वाकर्षण अधिक प्रखर होगा। सूर्य के द्रव्यमान वाले न्यूट्रान तारे की सतह से दूर भागने के लिये आवश्यक मुक्ति गति डेढ़ लाख किलोमीटर प्रति सेकंड यानी प्रकाश की गति की आधी होगी।

तो क्या ब्रह्माण्ड में ऐसे भी तारे मौजूद हैं जो इतने घने, इतने आंकुचित हैं कि उनकी सतह पर मुक्ति गति प्रकाश के वेग से अधिक है ? यदि ऐसे तारे मौजूद हों तो वे हमें दिखाई नहीं दे सकते . . . क्योंकि प्रकाश किरणें उनकी सतह छोड़ बाहर नहीं निकल सकतीं।

ऐसे तारों को ब्लैक होल या कृष्ण विवर कहते हैं। ब्लैक होल उन तारों को कहते हैं जो इतने भारी हैं कि उनका संकुचन श्वेत बटु या न्यूट्रान तारे के रूप में नहीं हो सकता। यह दशा तब पैदा हो सकती है जब सुपरनोव्हा का बचा खुचा गर्भ भाग सूर्य की मात्रा के दुगुने से भी काफी अधिक हो। ऐसे तारे के आकुंचन को कोई शक्ति रोक नहीं सकती और सिकुड़ते-सिकुड़ते वह आखिर कृष्ण विवर

बन जाता है। उदाहरण स्वरूप हम कह सकते हैं कि सूर्य से तिगुने द्रव्यमान वाले कृष्ण विवर का व्यास बीस किलोमीटर से भी कम होगा।

जो चीज हम देख ही नहीं सकते उसके अस्तित्व को सिद्ध करना आसान काम नहीं। कृष्ण विवर को हम देख नहीं सकते हैं और उससे रेडियो या और कोई भी लहरें बाहर नहीं निकलतीं। पर फिर भी उसके अस्तित्व को जाना जा सकता है उसके तीव्र गुरुत्वाकर्षण से। इसी शक्ति के बल पर वह आसपास की सभी वस्तुओं को आकर्षित करता है। अत: आसपास की चीजें उस पर आकर गिरती हैं जैसे गड्ढे में वस्तुएँ जा गिरती हैं। इसी कारण उसे "विवर" कहा जाता है।

चित्र क्रमाँक 27 में हम देखते हैं एक तारा युगल, यानी दो तारे A और B जो एक दूसरे की परिक्रमा करते हैं। ऐसे सैकड़ों तारा युग्म आकाश में देखे जा सकते हैं लेकिन यहाँ एक खासियत है और वह है कि तारा B है कृष्ण विवर ! यानी हम B को तो नहीं देख सकते, केवल A को गोलाकार या अंडाकार कक्षा में घूमते देखते हैं।
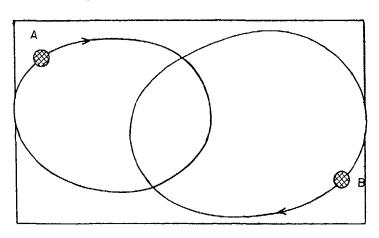
चित्र 27. तारा युगल के दोनों घटक तारे A,B एक दूसरे की परिक्रमा करते हैं।

यदि A अकेला होता तो एक जगह स्थिर रहता या सरल रेखा में स्थिर गति से जाता दिखाई देता। यदि उसे हम परिक्रमा करते देखें तो हम इस नतीजे पर पहुँचेंगे कि A को B जैसा एक अदृश्य तारा आकर्षित कर रहा है। इस तरह हम B के अस्तित्व को जान सकते हैं।

इसके अलावा यदि A और B एक दूसरे के बहुत निकट हों तो चित्र क्रमांक
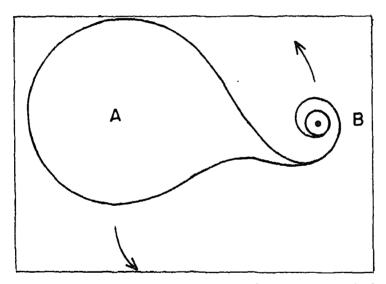
चित्र 28. यदि A और B एक दूसरे के बहुत निकट हों और B कृष्ण विवर हो तो A के पृष्ठभाग के द्रव्य B पर गिरते हैं।

28 के अनुसार B, A की सतह पर मौजूद वायु को खींच लेता है। B की ओर आकर्षित वायु उसका चक्कर लगाकर उसमें गिरती है। उस समय आपसी घर्षण से वह वायु गरम होकर चमकती है . . . साधारण प्रकाश से नहीं बल्कि एक्स किरणों से।

इस प्रकार यह संभव है कि अदृश्य कृष्ण विवर के चारों ओर परिक्रमा करने वाली गैस की एक टिकिया हम एक्स किरणों द्वारा देख सकें। एक्स किरणों की दूरबीनों से देखने पर ऐसे एक्स किरणों के तारा युगलात्मक स्रोत मिले हैं। उनमें से अधिकांश में, B तारा न्यूट्रान तारा साबित हुआ है। पर सिग्नस X–1 स्रोत में जो अदृश्य तारा है उसका द्रव्यमान सूर्य के पाँच-छः गुने से भी अधिक होने की वजह से हम उसे न्यूट्रान तारा नहीं मान सकते। वह कृष्ण विवर ही होगा ऐसा विश्वास किया जाता है।

लेकिन सिग्नस X–1 का यह सबूत कितना भी तगड़ा क्यों न हो, वह अप्रत्यक्ष है। हम कृष्ण विवर देख तो नहीं पाते . . . केवल उसकी उपस्थिति से जो घटनाएं होती हैं उनकी छानबीन कर पाते हैं। इसीलिये अभी हम सौ प्रतिशत विश्वास के साथ यह दावा नहीं कर सकते कि आज हमने ब्रह्माण्ड में कृष्ण विवर का अस्तित्व सिद्ध किया है।

□□

10

तारों के जीवन-मरण का चक्कर

तारे की जीवनी का ब्यौरा समाप्त प्राय ही है। शुरू में हाइड्रोजन जलाने वाला तारा आखिर श्वेत बटु या न्यूट्रान तारा या कृष्ण विवर के रूप में अपने जीवन का अंतिम काल बिताता है। मुख्य अनुक्रम से दानवावस्था और फिर उससे आगे छोटे या बड़े विस्फोट की अवस्था से तारे को गुजरना पड़ता है। इन सभी अवस्थाओं में स्थिर तारे आज हमें दिखाई देते हैं... जैसे किसी संयुक्त परिवार की ग्रुप फोटो में हम छोटे बच्चे से लेकर दादा दादी तक (कभी-कभी परदादा परदादी भी) एक साथ देखते हैं।

लेकिन अभी हमने एक अवस्था का वर्णन करना बाकी रखा है जो जीवन क्रम के अनुसार पहले ही देना चाहिये था। वह तारे के जन्म का वर्णन है। सूरज जैसा तारा जन्मा कैसे?

कृष्ण मेघरूपी सूतिकागृह

चित्र क्रमांक 29 में हम देखते हैं तारों का एक सूतिका गृह जहाँ नवजात तारे

पाये जाते हैं। हाल ही में पैदा हुए ये तारे केवल कुछ लाख साल के ही होंगे। याद रहे सूरज कोई पाँच अरब वर्ष का जवान तारा है। जरा हिसाब लगाओ . . . "पाँच
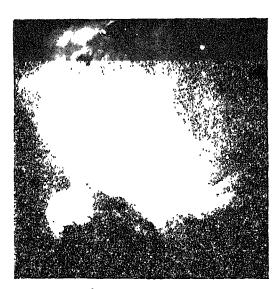
चित्र 29. ओरायन का विशाल अणुमेघ।

लाख" "पाँच अरब" का कितना हिस्सा है ? दस हजारवाँ। अब बताओ बीस वर्ष के नौजवान की आयु का दस हजारवाँ भाग कितना हुआ ? लगभग साढ़े सत्रह घंटे। यानी नवजात बच्चे के जीवन का पहला दिन भी पूरा नहीं हुआ ऐसा समझो बस चित्र क्रमांक 29 में स्थित तारे अभी-अभी अपने जीवन की शुरुआत कर रहे हैं।

अंतरिक्ष में ऐसे अनेक प्रचंड मेघ पाये जाते हैं जिनकी विशेषता यह है कि उनमें रासायनिक अणु पाये जाते हैं। अंतिम परिच्छेद में हम इस विशेषता का फिर से जिक्र करेंगे। इन "महा-आण्विक मेघों" की व्याप्ति सौ प्रकाश वर्ष के आसपास होती है।
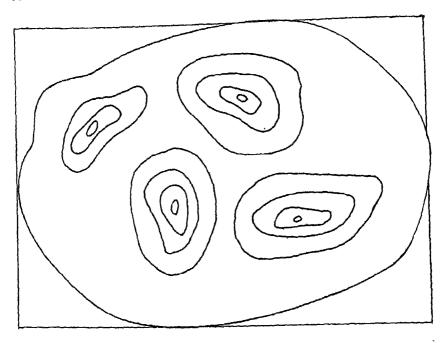
चित्र 30. महा-आण्विक मेघ के अधिक घनत्व वाले भागों के कंटूर दर्शाये गये हैं।

ऐस विशाल मेघ के सभी भाग एक जैसे नहीं होते। कुछ भागों में वायु का घनत्व अधिक होता है तो कुछ में कम। अधिक घनत्व वाले भाग "आण्विक मेघ" के नाम से जाने जाते हैं। यदि हम महा-आण्विक मेघ की तुलना देश से करें तो आण्विक मेघों की शहरों से कर सकते हैं। (देखो चित्र क्रमांक 30)

लगभग एक प्रकाश वर्ष व्याप्ति के आण्विक मेघ का अपने गुरुत्वाकर्षण की वजह से आकुंचन होना शुरू हो जाता है। इसी आकुंचन का परिणाम तारे के निर्माण में होता है, और जैसा कि हम आगे देखेंगे, ग्रह भी इसी समय बनते हैं।

लेकिन इस सिकुड़ने की अवस्था पर जरा गौर करें। भौतिकी के नियम बताते

हैं कि गैस को दबाने से वह गरम हो जाती है। इसलिये हमारा आण्विक मेघ का गोला दबते-दबते गरम होता है और चमकने लगता है लेकिन उसका जो प्रकाश आता है वह अधिकांश अवरक्त (इन्फ्रारेड) किरणों से आता है जिन्हें हम आँख से देख नहीं पाते हैं पर इन्फ्रारेड दूरबीनों से जान सकते हैं।

इसलिए इन्फ्रारेड किरणों से प्रकाशमान वायुमेघों में नये तारे अपने जीवन की शुरुआत करते जान पड़ते हैं। इसी वजह से हम कह सकते हैं कि चित्र क्रमाँक 29 वाले महा-आण्विक मेघ के इन्फ्रारेड से प्रकाशित भाग में नवजात तारों का एक समूह उपस्थित है।

अब हम देखेंगे तारे की किशोरावस्था जब उसके चारों ओर चक्कर लगाने वाले ग्रह पैदा होते हैं और वह खुद ऊर्जा निर्माण के काबिल बनता है।

ग्रहमाला की उत्पत्ति

हमने अभी देखा कि नवजात तारा एक आण्विक मेघ का गोला है जो आंकुचित होते-होते गरम होकर इन्फ्रारेड से प्रकाशमान हो जाता है। इस घटना का अभी एक पहलू बाकी है जो तारे के अगले विकास के लिये महत्वपूर्ण है।

वह पहलू है स्पिन या चक्कर काटने का। मेघ का गोला एक धुरी के चारों ओर परिवर्तन करता है और इस गुण के कारण उसका आकुंचन सभी दिशाओं में एक जैसा नहीं होता। उस पर अपकेंद्री बल का प्रभाव पड़ता है। जब तुम स्कूटर या कार में यात्रा करते हो तब तुम भी इस बल को महसूस करते हो। जब तुम्हारी गाड़ी बाएँ ओर मुड़ती है तो तुम्हें लगता है कि तुम बाहर उल्टी दिशा में ढकेले जा रहे हो। (इस बल को अंग्रेजी में सेंट्रीफ्यूगल फोर्स कहते है।)

इसका कारण चित्र क्रमांक 31 से समझ सकते हैं। वहाँ गाड़ी में बैठे यात्री A की प्रवृत्ति यह है कि वह सीधी दिशा में अपनी (यानी गाड़ी की) गति से जाता रहे। यह प्रवृत्ति न्यूटन के गति के पहले सिद्धांत की द्योतक है। लेकिन गाड़ी घुमाव के कारण दिशा बदल देती है। अत: गाड़ी के हिसाब से यात्री के जाने की प्रवृत्ति घुमाव

की उल्टी दिशा में हो जाती है और यात्री को बाहर ढकेले जाने की अनुभूति होती है। इसी को अपकेंद्री बल का प्रभाव कहते हैं।

जब वायुमेघ का गोला अपनी धुरी के चारों ओर चक्कर लगाता है तो उसके कण भी इसी बल के प्रभाव से बाहर फेंके जाते हैं।

चित्र 31. अपकेन्द्री बल का उदाहरण

चित्र क्रमांक 32 में हम इसका परिणाम देखते हैं। गोले की एक प्रवृत्ति है अपने गुरुत्वाकर्षण के कारण सभी ओर से आकर्षित होने की। साथ-ही साथ अपकेंद्री बल के कारण उसके कण धुरी से दूर भागना चाहते हैं। परिणामत: गोला धुरी की ओर से सर्वाधिक सिकुड़ता है पर धुरी की लंबवत् दिशा में बाहर की ओर फैलता है।

इस प्रकार उसका आकार एक सिकुड़े गोले की तरह हो जाता है जिसके चारों ओर एक टिकिया फैली है। यदि पृथ्वी ठोस पदार्थों की न होकर वायु की बनी होती तो वह भी ध्रुवों की दिशा में सिकुड़ी एवं विषुवत् वृत्त की दिशा में फैली नजर आती। वास्तव में पृथ्वी ध्रुवों की दिशा में थोड़ी चपटी है भी, पर ठोस होने के कारण यह परिणाम- चित्र क्रमांक 32 इतना लक्षणीय नहीं है।
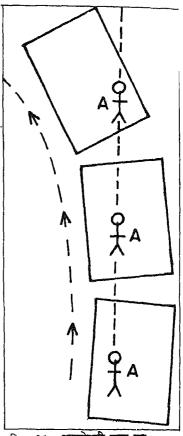
फ्रेड हायेल एवं हान्स आल्वेन जैसे प्रसिद्ध वैज्ञानिकों ने यह दावा किया है कि टिकिया का विषुवत् वृत्त की दिशा में फैलाव एवं उसका परिवलन दोनों चुंबकीय परिणामों द्वारा बढ़ा दिये गये।

इस कारण बाहरी टिकिया दूर तक फैली एवं उसका अपनी धुरी की परिक्रमा का वेग बढ़ गया जबकि केंद्रीय गोले की धुरी की परिक्रमा का वेग घट गया।

इसी गोले का सूर्य जैसा तारा बना एवं घूमती टिकिया के टूट कर ग्रह बने जो सूर्य की परिक्रमा करते रहे। वह गोला सूर्य जैसा तारा कब बना ?

जब आकुंचन होते-होते उसका केंद्रीय तापमान करोड़ अंश से अधिक हुआ . . . क्योंकि तब वहाँ के तप्त भाग में परमाणु भट्टी का प्रादुर्भाव हुआ और छठवें परिच्छेद के विवरण के अनुसार वहाँ न्यूक्लीय संलयन द्वारा ऊर्जा बनने लगी।

चित्र 32. **ग्रहमाल कैसे बनती है इसका वर्णन ऊपर दर्शाया गया है। चार दशाओं में यह घटना पूरी होती है : (i) वायुमेघ का परिवलन (ii) टिकिया का निर्माण (iii) टिकिया का फैलाव एवं (iv) टिकिया से ग्रहों की उत्पत्ति।**

इस चित्र के सबूत क्या हैं ? अपनी ग्रहमाला छोड़ अभी अन्य किसी तारे के ग्रहों को हम देख नहीं पाये। स्वयं प्रकाशित होने की वजह से ग्रहों को देखना आसान काम नहीं है।
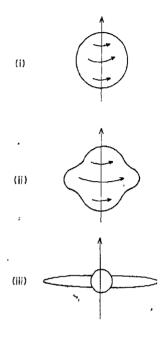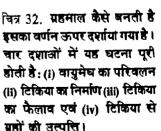
खुद हमारी ग्रहमाला का बाहरी ग्रह प्लूटो इसी शताब्दी में दिखाई दिया। फिर दूर की ग्रहमालाएँ देखना कितना कठिन होगा, इसका हम अनुमान लगा सकते हैं। फिर भी भविष्य में अंतरिक्ष में छोड़े जाने वाली दूरबीन द्वारा अन्य तारों के ग्रहों को खोजने का यत्न किया जायेगा।

हाँ, 1983 में अंतरिक्ष में छोड़े गये IRAS उपग्रह की दूरबीन ने इन्फ्रारेड
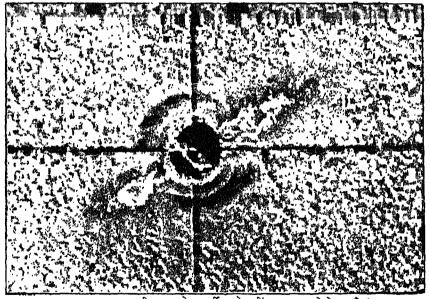
चित्र 33. आइरास उपग्रह की इन्फ्रारेड दूर्बीन से खींचा गया फोटो यहाँ कंप्यूटर द्वारा चित्रित है। इसमें बीटा पिक्टोरिस तारे के चारों ओर टिकिया का आभास मिलता है।

किरणों द्वारा आसपास के कुछ तारों के पास ग्रहमालाएँ बनाये जाने के सबूत प्राप्त किये। चित्र क्रमांक 33 में बीटा पिक्टोरिस नामक तारे का कंप्यूटर चित्र है जो इन्फ्रारेड किरणों के आधार पर बनाया गया। यह तारा सूर्य के मुकाबले आयु में कम

है। चित्र में हम गोल तारे के चारों ओर जो पट्टी देखते हैं वह उसी टिकिया की द्योतक है जिससे आगे चल कर ग्रह बनेंगे।

सुपरनोव्हा द्वारा तारा निर्माण में योगदान

आण्विक मेघ के सिकुड़ने से तारा बनता है इस सिद्धांत में एक कमज़ोरी है। यह निश्चित रूप से कहा नहीं जा सकता कि इस प्रक्रिया का प्रारंभ अपने आप हुआ होगा . . . यानी मेघ अपने आप सिकुड़ने लगेगा क्योंकि प्रारंभिक अवस्था में मेघ का घनत्व बहुत कम रहता है और उसकी गुरुत्वाकर्षण शक्ति उतनी प्रबल नहीं रहती कि मेघ के वायु के दबावों के बावजूद उसे आंकुचित कर सके। यदि किसी बाहरी प्रेरणा से मेघ का आकुंचन शुरू कर दिया जाय तो बढ़ते घनत्व के कारण उसका गुरुत्वाकर्षण उसे और सिकोड़ने में कामयाब होगा।

यह प्रेरणा मिल सकती है सुपरनोव्हा से ! एक तारे के विस्फोट से। यह कैसे संभव है ? इसे अब हम संक्षेप में देखेंगे। इस प्रक्रिया के दो सबूत भी हमारे पास हैं।

पहला सबूत मिला एक अशनि की छानबीन से जो सन् 1969 में मेक्सिको के पुओब्लिटो द अयेंडे नामक देहात में गिरा था। मीटिओराइट छोटे बड़े पत्थर के टुकड़े होते हैं जिनका निर्माण हमारी सूर्यमाला के ग्रहों के साथ ही हुआ था और जो ग्रहों की तरह सूर्य का चक्कर लगाते हैं। कभी-कभी ये टुकड़े पृथ्वी के गुरुत्वाकर्षण के कारण उसी पर आ गिरते हैं और गिरते-गिरते वायुमंडल की हवा के घर्षण से गर्म हो चमकते हैं। रात को ऐसे चमकते टुकड़ों को देख ऐसा भ्रम होता है मानो आकाश का तारा टूट कर गिरा हो।

तो अयेंडे में अशनि के पदार्थों की रासायनिक एवं न्यूक्लीय छानबीन से उसमें मैग्नीशियम के कुछ ऐसे न्यूक्लियस (Mg^{26}) पाये गये जो 26 कणों से (12 प्रोटान एवं 14 न्यूट्रान से) बने थे। सूर्यमाला के अन्य भागों में पाये जाने वाले इस प्रकार के मैग्नीशियम न्यूक्लियस की अपेक्षा अयेंडे में इनका परिमाण कहीं

अधिक था। तो सवाल पैदा हुआ कि ये न्यूक्लियस वहाँ आये कैसे ?

वैज्ञानिकों ने इस प्रश्न को उसी उत्साह से सुलझाया जो शेरलक होम्स जैसे जासूस को किसी खून के मामले को हल करने को प्रेरित करता है। खून के स्थान पर पड़ी चीजों से खूनी व्यक्ति का पता लग सकता है। अयेंडे के मैग्नीशियम के द्वारा वैज्ञानिक इस नतीजे पर पहुँचे कि वह ऐसे स्थान पर बना जहाँ कुछ ही समय पहले एक तारे का विस्फोट हुआ था।

घटनाक्रम कुछ ऐसा रहा। एक सुपरनोव्हा के विस्फोट के समय उसमें जो न्यूक्लियस बनकर बाहर गिरते हैं उनमें Al^{26} यानी एल्यूमिनियम के 13 प्रोटान एवं 13 न्यूट्रान के न्यूक्लियस भी आते हैं। न्यूक्लीय भौतिकी हमें यह बताती है कि ये न्यूक्लियस कालानुसार Mg^{26} में परिवर्तित हो जाते हैं। सामान्यत: किसी भी Al^{26} के ढेर में से आधे न्यूक्लियस 7,20,000 वर्षों में Mg^{26} में बदल जाते हैं। चूँकि ऐसे न्यूक्लियस (Mg^{26}) अत्याधिक मात्रा में अयेंडे मीटिओराइट में मिले इसलिये हम यह जान पाते हैं कि वह ऐसी जगह बना जहाँ सुपरनोव्हा के विस्फोट द्रव्यों में से Al^{26} का हाल ही में क्षय होकर Mg^{26} न्यूक्लियस बने थे। वैज्ञानिकों का अनुमान है कि विस्फोट एवं मीटिओराइट के निर्माण के बीच कोई दस लाख साल ही गुजरे होंगे। यदि अधिक समय बीता होता तो विस्फोट के सब नामोनिशान नष्ट हो जाते।

दूसरा सबूत मिलता है एक पूर्व विस्फोटित न्यूक्लियस सुपरनोव्हा के खंडहर से। कैनिस मेजारिस R–1 नाम से जाना गया यह स्थान क्रैबनेबुला की भाँति विस्फोट जन्य पदार्थों से व्याप्त है। विस्फोट में बाहर फेंके गये गैस के कण अभी भी तेजी से बाहर भाग रहे हैं। उनके वेग से ही हम यह अनुमान लगा पाते हैं कि यहां विस्फोट हुआ था लगभग आठ लाख वर्ष पहले।

इसी क्षेत्र में इन्फ्रारेड किरणों द्वारा नवजात तारों का आभास भी मिलता है। इन तारों की आयु कोई तीन लाख वर्ष होगी। आज तक ज्ञात तारों में से न्यूनतम

आयु वाले तारे होंगे।

इस प्रकार ऐसा प्रतीत होता है कि जहाँ कोई तारा विस्फोटित होकर सुपरनोव्हा बनता है वहाँ नये तारे कुछ ही देर में पैदा हो जाते हैं। कारण स्पष्ट है। साधारणत: किसी भी विस्फोट से बड़े दबाव वाली वायु लहरें निकलती हैं। जब पृथ्वी पर बम विस्फोट होता है तो ऐसी लहरों के धक्कों से दीवारें चकनाचूर हो जाती हैं। अंतरिक्ष में सुपरनोव्हा से निकलने वाली विस्फोट लहरें आसपास के वायुमेघों पर टकराकर उन्हें दबा देती हैं।

ठीक यही दबाव उन वायुमेघों को आकुंचन के लिये प्रेरित करता है . . . जिसका परिणाम तारों के जन्म में होता है। इसे हम प्रकृति का न्याय कह सकते हैं कि एक तारे के अंत से दूसरे के जीवन की शुरुआत होती है।

और यहीं हमारी तारों की जीवनगाथा समाप्त होती है।

□□

11

न सुलझी पहेलियाँ

यद्यपि हमारा विवरण पूरा हो चुका है फिर भी कुछ ऐसे प्रश्नों का जिक्र करके हम यह पुस्तक समाप्त करेंगे जो अब तक सुलझ नहीं पाये हैं। विज्ञान की किसी भी शाखा में ऐसे न सुलझे प्रश्न सर्वदा मौजूद रहते हैं। ऐसे प्रश्नों की मौजूदगी विज्ञान की उन्नति के लिये आवश्यक है नहीं तो जिज्ञासा से उत्पन्न विज्ञान आगे कैसे बढ़ पायेगा ?

सूरज के न्यूट्रीनों

न्यूट्रीनों ऐसे कण हैं जो प्रकाश की गति से यात्रा करते हैं। उनका एक गुण यह है कि किसी भी पदार्थ से उनकी प्रक्रिया या तो होती ही नहीं है, और अगर होती है तो बहुत धीमी गति से मंद स्तर पर। इसी गुण के कारण न्यूट्रीनों पदार्थों के घने मोटे ढेर के आर पार आसानी से निकल जाते हैं।

सूरज जैसे तारे के गर्भ भाग से न्यूक्लीय क्रिया के फलस्वरूप काफी न्यूट्रीनों निकलते हैं। वे सीधे सूरज की काया को लाँघकर अंतरिक्ष में जाते हैं। उनमें से

कुछ हमारी पृथ्वी की दिशा में भी आते हैं। यदि हम उन्हें पकड़ पायें तो उनके द्वारा हमें सूर्य के अंतर्भाग की जानकारी मिल सकेगी।

याद रहे, हमें सूरज की अधिकांश जानकारी प्रकाश से मिलती है। लेकिन वह आता है सूरज के बाहरी, पृष्ठभाग से। अंदरूनी प्रकाश कर्ण मार्ग में स्थित पदार्थों द्वारा शोषित या छितराए जाने के कारण अपनी मूल अवस्था में बाहर नहीं आ पाते।

न्यूट्रीनों और प्रकाश कण मानों सूरज की जासूसी कर उसकी जानकारी लाते हैं। न्यूट्रीनों ऐसा आदर्श जासूस है जो अंदरूनी जानकारी लेकर सीधे हमारे पास आता है। प्रकाश कण रास्ते में पदार्थों की क्रिया के झमेले में पड़कर मानो केंद्र भाग से लाई जानकारी भूल जाता है, उसे याद रहती है केवल पृष्ठ भाग की जानकारी।

लेकिन न्यूट्रीनों पकड़ना आसान काम नहीं ! आज सूरज के न्यूट्रीनों ग्रहण करने के लिये एक ही डिटेक्टर है, अमेरिका में भूमि के नीचे होमस्टेक खान में। इसे वैज्ञानिक डेव्हिस ने पिछले दो दशकों से कार्यान्वित किया है।

डेव्हिस के डिटेक्टर में सूर्य जनित न्यूट्रीनों मिलते तो हैं पर पर्याप्त मात्रा में नहीं ! जितनी संख्या में ये कण मिलने चाहिये उसके केवल चौथाई ही मिल पाते हैं। इस पहेली का कारण अभी मालूम नहीं हो सका है। क्या परमाणु क्रियाओं की हमारी जानकारी अभी अधूरी ही है जिसकी वजह से हमारी अपेक्षित न्यूट्रीनों कणों की संख्या गलत साबित हो ? या इन कणों की जानकारी ही अभी अपर्याप्त है ? क्या सूरज से निकले न्यूट्रीनों हमारे यहाँ तक पहुँचने के पहले ही किसी अन्य कणों में परिवर्तित हो जाते हैं ? या डेव्हिस के डिटेक्टर में ही कोई अज्ञात त्रुटि है जिस कारण वह सभी न्यूट्रीनों पकड़ नहीं पा रहा है ?

इन प्रश्नों के उत्तर शायद तब मिलें जब नये अधिक कार्यसक्षम डिटेक्टर बनें। ऐसे डिटेक्टर बन रहे हैं और उनके द्वारा सूरज की इस पहेली को बुझाने की आशा ज्योतिष वैज्ञानिकों को है।

ग्रहमालाओं की खोज

जैसा हमने पिछले परिच्छेद में देखा, आइरास उपग्रह की इन्फ्रारेड दूरबीन ने आसपास के तारों के पास बन रही ग्रहमालाओं की जानकारी दी है। लेकिन अभी हमें ऐसा कोई तारा नहीं मिला जिसके पास ग्रह की मौजूदगी का हम निस्संदेह दावा कर सकें। इस बात को हम पहले ही जान चुके हैं कि ग्रहों को (जो हमसे अनेक प्रकाश वर्ष दूर तारों की परिक्रमा कर रहे हैं) खोजना मुश्किल है। दो अप्रत्यक्ष मार्गों से हमें ग्रहों का अस्तित्व मालूम हो सकता है।

एक मार्ग है ग्रहणों का। यदि किसी तारे का ग्रह, तारे और हमारे बीच आये तो हमें तारे की तेजस्विता में कमी नजर आयेगी। सूर्यग्रहण के समय चन्द्रमा सूर्य से आने वाले प्रकाश को इसी तरह रोक देता है। खग्रास सूर्यग्रहण के अवसर पर तो पूरा का पूरा प्रकाश चंद्रमा द्वारा रोका जाता है। लेकिन पृथ्वी-ग्रह-तारा इनके एक रेखा में आने पर तारे का अल्पांश ही ग्रह-द्वारा ढक दिया जायेगा। हाँ, यदि ग्रह का आकार काफी बड़ा . . . तारे से तुल्य हो तो तारा काफी फीका पड़ जायेगा। तो इस प्रकार तारे की चमक कुछ काल के लिये घट जायगी। तारे की चमक के इन सूक्ष्म परिवर्तनों को नापने के लिये अधिक कार्यसक्षम दूरबीन की आवश्यकता है।

ग्रहों का पता लगाने का दूसरा रास्ता है तारे की स्थिति के सूक्ष्म अवलोकन का। उदाहरण से यह बात स्पष्ट हो जायगी। हम जानते हैं कि पृथ्वी सूर्य की परिक्रमा करती है, कारण सूर्य के गुरुत्वाकर्षण का बल उस पर काम करता है। जैसे सूर्य का प्रभाव पृथ्वी की गति पर पड़ता है वैसे ही पृथ्वी का सूर्य पर क्यों नहीं पड़ता ? पड़ता अवश्य है, पर सूर्य का द्रव्यमान बहुत अधिक होने की वजह से सूर्य टस-से मस नहीं होता। हाँ, यदि पृथ्वी की अपेक्षा अधिक भारी, गुरु जैसा ग्रह सूर्य के पास होता तो सूर्य अवश्य अपने स्थान से थोड़ा सा हिलता।

एक प्रयोग तुम खुद करके देख सकते हो। दसवीं कक्षा के एक लड़के के साथ पहली कक्षा के एक लड़के का रस्सी का खेल करवा दो। बड़ा बालक छोटे को

आसानी से खींच लेगा। पर यदि पहली के बजाय छठी कक्षा का बालक खूब जोर करे तो वह बड़े को अपनी जगह से थोड़ा सा हिलाने में अवश्य कामयाब होगा।

ऐसे ही अगर हम एक तारे को गौर से देखें तो पास घूमने वाले ग्रह के प्रभाव से वह थोड़ा सा हिलता नज़र आयेगा। गौर से देखने का मतलब है, एक ऐसी दूरबीन से देखा जाए जिससे तारे की सूक्ष्म् से सूक्ष्म हलचल भी नजर आये। दो किलोमीटर दूरी से किसी क्रिकेट गेंद का एक सेंटीमीटर मात्र सरकना देख पाने की क्षमता ऐसी दूरबीन में होनी चाहिये।

अंतरिक्ष में छोड़ी जाने वाली दूरबीन (देखो चित्र क्रमांक 34) ऐसी क्षमता रखती है। पृथ्वी के कंपनशील वायुमंडल से गुजरने वाली प्रकाश किरणें थरथराती हैं और इसलिये पृथ्वी की सतह पर रखी दूरबीन तारों के बिंब पूर्णतया स्थिर नहीं रख
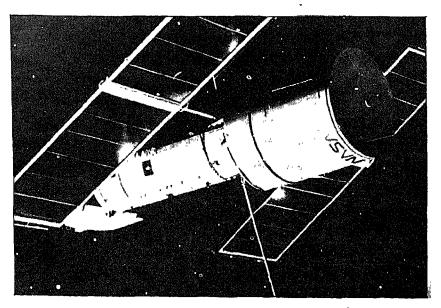
चित्र 34. नासा द्वारा अंतरिक्ष में छोड़ी जाने वाली दूरबीन।

पातीं। अंतरिक्ष में रखी दूरबीन इस दोष से रहित होने के कारण बारीकी से निरीक्षण कर सकती है। इसके अलावा वायुमंडल द्वारा तारों के प्रकाश का शोषण कुछ मात्रा में होता है, जिस वजह से वे पृथ्वी से उतने सुस्पष्ट नहीं दीख पाते जितने अंतरिक्ष से देखे जा सकते हैं।

चैलेंजर स्पेस शटल के दुर्घटनाग्रस्त हो जाने से इस दूरबीन की परियोजना को धक्का पहुँचा है। यह स्पेस शटल से अंतरिक्ष में छोड़ी जाती। अत: जब तक ऐसे मान पुन: कार्यान्वित नहीं होते इस दूरबीन एवं उसके द्वारा नियोजित अन्वेषणों को आगे की बाट जोहनी पड़ेगी।

अन्य सजीवों की खोज

हमारी मानवजाति एवं पशु पक्षियों, कीड़े मकोड़ों, जलचरों को आसरा देने वाली पृथ्वी क्या संपूर्ण ब्रह्माण्ड में एक ही स्थान है जहाँ जीव पाये जाते हैं ? इस प्रश्न का उत्तर विज्ञान कथाओं में तो बहुत पहले ही दे रखा है। एच. जी. वेल्स, आर्थर सी. क्लार्क, रे ब्रैडबरी जैसे मान्यवर लेखकों ने पृथ्वी के बाहर तंत्र विकसित जीवसृष्टि की अनेक रोचक कहानियाँ लिखी हैं। फिर समाचार पत्रों में तुमने अक्सर यू. एफ. ओ. (अन आयडेंटिफाइड फ्लाइंग आब्जेक्ट) के बारे में पढ़ा होगा जिससे यह सूचित किया जाता है कि वे परलोक से आयी उड़नतश्तरियाँ हैं।

मनगढंत एवं सनसनीखेज वृत्तांतों को छोड़ यदि हम वास्तविक वैज्ञानिक सबूतों पर गौर करें तो हम किस नतीजे पर पहुँचते हैं ?

सर्वप्रथम, जीवनिर्माण कैसे होता है। वह हमारी पृथ्वी पर कैसे हुआ, इसकी अभी पूरी जानकारी नहीं मिल पाई है। ओपेरिन एवं हाल्डेन ने पृथ्वी पर जीवन के निर्माण का एक वैज्ञानिक चित्र प्रस्तुत किया है जिसमें कोई साढ़े चार अरब वर्ष पहले रासायनिक क्रियाओं द्वारा, जिसमें वायुमंडल में चमकने वाली बिजलियों ने ऊर्जा स्रोत का काम निभाया, ऐसे कार्बनिक अणु तैयार हुए जो डी. एन. ए. जैसे जीवों के मूल अणु के भाग स्वरूप हैं। ऐसे अणुओं से डी. एन. ए., फिर सेल,

फिर जीवाणु कीटाणु आदि और फिर डार्विन के उत्क्रांतिवाद के सिद्धांत के अनुसार अधिकाधिक जटिल बनावट के प्रगत-जीव तैयार हुए, ऐसा माना जाता है। पर इस चित्र में अभी काफी न सुलझी बातें हैं जिनका उत्तंर खोजने में जैविकी वैज्ञानिक व्यस्त हैं। पर यह सर्वसाधारण धारणा जैविकीतज्ञों में पाई जाती है कि जीवनिर्माण इतना जटिल है कि सामान्यत: ब्रह्माण्ड में हमारी जैसी जीव सृष्टियाँ बहुत कम या नहीं होंगी। उसके विपरीत ज्योतिष वैज्ञानिकों का दृष्टिकोण अधिक आशावादी है। हमारी आकाश गंगा के सौ अरब से अधिक तारों में से सूर्य एक है। हमारी आकाश गंगा जैसी अरबों गैलेक्सियाँ ब्रह्माण्ड में पायीं जाती हैं। अत: यह अनुमान करना कठिन लगता है कि इतने विशाल ब्रह्माण्ड में हमारी जीव सृष्टि एकमात्र है।

यह स्पष्ट है कि इस समस्या को सुलझाने के लिये जैविकी एवं भौतिकी दोनों का योगदान आवश्यक है। तारों में से कितने ऐसे हैं जिनकी ग्रहमालाएँ हैं ? यदि इस प्रश्न का उत्तर मिल सके तो हम इस उत्तर की खोज में काफी आगे बढ़ सकेंगे। क्योंकि यदि सजीव हमारे जैसे सशरीर हों तो उनका विकास ग्रहों पर आसानी से हो सकेगा। मगर हाँ ग्रह इतनी दूरी पर होना चाहिये जहाँ उसे तारे से पर्याप्त ऊर्जा मिल सके पर तारे की गर्माहट उसके लिये हानिकारक न साबित हो।

सूर्य की ग्रह माला में पृथ्वी ऐसी आदर्श जगह पर स्थित है। हो सकता है कि सभी तारों के पास नहीं पर कुछ तारों के पास ऐसे ग्रह मौजूद हों जो पृथ्वी जैसी जीवन पोषक जलवायु वाले हों। ऐसे कुछ ग्रहों में संभव है कि जीवसृष्टि तैयार हो और पनप उठे। वैज्ञानिकों के पास इस प्रश्न का उत्तर अभी नहीं है कि हमारी आकाश गंगा में अति विकसित जीवसभ्यताएँ कितनी होंगी। यहाँ विशेषज्ञों में मतभेद है . . . कोई मानते हैं कि हमारी पृथ्वी सजीवों का एकमात्र स्थान है तो कुछ का कहना है कि अरबों विकसित सजीव कालोनियाँ, आकाश गंगा में हैं। इनके मध्य की विचारधारा ऐसी कालोनियों की संख्या लाख-दस लाख के आसपास मानती है।

मानव जाति के लिये सबसे अनूठी खोज वह होगी जब पृथ्वीवासी बाहरी सजीवों के अस्तित्व का सबूत पाएँगे। ब्रह्माण्ड की विशालता और हमारी तकनीकी की मर्यादा को ख्याल में रखकर हमें इस प्रश्न का उत्तर कोलंबस, वास्को डी गामा के समान यात्रा करके नहीं मिलेगा। हाँ यदि ऐसी कालोनियाँ परस्पर संदेशों को आदान प्रदान करती हों तो हम विशाल दूरबीन से उस वार्तालाप को "सुन" सकेंगे। संदेश वहन के लिये रेडियो या माइक्रोवेव लहरें अधिक उचित मालूम पड़ती हैं क्योंकि वे आकाश गंगा में बिना खास शोषण के दूर-दूर तक जा पाती हैं और उन्हें भेजने में ऊर्जा कम लगेगी। पर अभी इस प्रकार के प्रयत्न कामयाब नहीं हो पाये हैं।

तारों की जीवन गाथा का गहरा नाता है सजीवों की जीवगाथा से। कैसे तारों के पास कैसे ग्रहों पर कैसे जीव होंगे यह जानने के लिये हमें अपनी तारों की जानकारी आगे बढ़ानी होगी।

उपसंहार

सिकंदर को अपने बचपन में इस बात का डर था कि उसके बहादुर पिता सारी पृथ्वी जीतकर उसके लिये कोई भी चुनौतियाँ नहीं छोड़ेंगे। विज्ञान भी चुनौतियों पर पाला पोसा जाता है। प्रकृति की पहेलियाँ ये चुनौतियाँ खड़ी करती हैं। आज तारों की जानकारी पिछली शताब्दी की तुलना में बहुत आगे है लेकिन ऊपर चर्चित पहेलियाँ यह सूचित करती हैं कि अभी बहुत कुछ जानना बाकी है।

आशा है यथा समय तुम भी इन पहेलियों के हल में महत्वपूर्ण योगदान दोगे।

□□